# मुस्लिम औरतों की ज़िम्मेदारियाँ

मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी

अनुवाद

मुहम्मद आबिद हामिदी

# विश्य-सूची

⊙⊙⊙

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही दयावान और मेहरबान है।

# भूमिका

इस्लाम ने औरत को जो अधिकार दिए हैं उनकी बातें तो बहुत होती हैं और उनपर बड़ी बहसें भी होती हैं लेकिन उसने औरत पर जो ज़िम्मेदारियाँ डाली हैं उनकी चर्चा ज़रा कम ही होती है। होती भी है तो केवल उसकी घरेलू और ख़ानदानी (पारिवारिक) ज़िम्मेदारियों की। और वह भी बहुत हल्के-फुल्के तथा सरसरी अन्दाज़ में। ज़्यादा गहराई से जायज़ा लेने की कोशिश नहीं की जाती। जहाँ तक उसकी सामाजिक और सामूहिक ज़िम्मेदारियों का सम्बन्ध है उसमें कोई रोक-टोक बिल्कुल नहीं की जाती जबकि इस्लाम यह चाहता है कि औरत सामूहिक जीवन से किनाराकश और असम्बन्धित न रहे बल्कि मर्द के साथ मिलकर दीन के प्रचार-प्रसार, उसके क़ायम करने तथा समाज के सुधार और निर्माण की ज़िम्मेदारी अन्जाम दे। इसमें शक नहीं कि इस्लाम ने औरत और मर्द की भाग-दौड़ और कार्यक्षेत्र के दायरे अलग रखे हैं। दोनों को कुछ सीमाओं का पाबन्द बनाया है लेकिन इसके बावजूद उसके नज़दीक दोनों की ज़िन्दगी का मक़सद एक ही है और पूरे जीवन में उन्हें एक-दूसरे का सहभागी तथा सहायक होना चाहिए।

एक लम्बे समय से बल्कि यूँ कहना चाहिए कि कई सौ साल से मुसलमान औरत दुनिया के, यहाँ तक कि ख़ुद मुस्लिम उम्मत के मामलों और मसलों से अलग-थलग ही नहीं, बेख़बर भी रही है। जबकि आरम्भिक काल में इसकी एक-दूसरी ही तस्वीर हमारे सामने आती है। वह उन मामलों में गहरी दिलचस्पी लेती थी और उनका हक़ अदा करने

की कोशिश करती थी। यहाँ इस विषय पर मैंने क़ुरआन और हदीस की रौशनी में सिर्फ़ उसूली बहस की है, इस्लामी इतिहास से इसकी मिसालों का उल्लेख अपनी दूसरी किताबों में कर दिया है।

यह किताब इससे पहले उर्दू में दोबार प्रकाशित हो चुकी है। अब की बार मैंने इसमें कुछ बहसों को बढ़ाया है जिसकी वजह से पृष्ठ दो गुने हो गए हैं। इसकी तरतीब और नाम में भी थोड़ी सी तब्दीली कर दी है। दुआ करता हूँ कि अल्लाह इस ख़िदमत को क़बूल फ़रमाए और उसके बन्दों को इससे ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा पहुँचे।

जलालुद्दीन

(10 अप्रैल 1986 ई॰)

# मुस्लिम औरतों की सामाजिक ज़िम्मेदारियाँ

इस दुनिया में बेशुमार क़ौमें, नस्लें और जमाअतें थीं। उनमें से कुछ अपने इल्म व हुनर, फ़िक्र व फ़लसफ़ा, तहज़ीब व तमद्दुन (सभ्यता और संस्कृति) और माद्दी (भौतिक) तरक़्क़ी और ख़ुशहाली में बहुत नामवाली भी थीं लेकिन इन सबके होते हुए वे अपने पैदा करनेवाले, मालिक, माबूद (पूज्य) और हाकिम (शासक) को भूली हुई थीं। उससे बेपरवाह और बेख़ौफ़ जीवन बिता रही थीं। पूरे संसार में इस सिरे से उस सिरे तक अल्लाह की नाफ़रमानी का बहुत ज़्यादा चलन था। कोई उसे उसके अन्जाम से ख़बरदार करनेवाला न था।

## मुस्लिम उम्मत की ज़िम्मेदारी

ये थे वे हालात जिनमें अल्लाह ने अपने आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के ज़रीए एक उम्मत खड़ी की ताकि वह दुनिया को उसके दीन की तरफ़ बुलाए, कुफ़्र, शिर्क और इलहाद व दहरियत (नास्तिकता) से उसे निकाले, उसे यह हक़ीक़त समझाए कि ख़ुदा की इस कायनात में सिर्फ़ उसी की इबादत (पूजा) और फ़रमाँबरदारी होनी

चाहिए। इसी में इनसान की भलाई और कामयाबी है। ख़ुदा से बग़ावत और नाफ़रमानी बड़ी ही ख़तरनाक है। इससे उसकी दुनिया और आख़िरत (लोक-परलोक) दोनों ही तबाह हो जाएँगी। इस तरह मुहम्मद *(सल्ल.)* की यह उम्मत पूरी दुनिया की ख़ैर व फ़लाह और नजात के लिए उठाई गई, उसे "ख़ैरे-उम्मत" का लक़ब (उपाधि) दिया गया और उसे जो काम सौंपा गया है वह है "भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना"। अतः क़ुरआन में है –

> "तुम सबसे बेहतर उम्मत हो जिसे लोगों के लिए निकाला गया है। तुम भलाई का हुक्म देते और बुराई से मना करते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो।" (क़ुरआन, 3:110)

मारूफ़ व मुनकर (भलाई और बुराई) बहुत व्यापक पारिभाषिक शब्द हैं। इसमें ख़ुदा का उतारा हुआ पूरा दीन आ जाता है। दुनिया को भलाई का हुक्म देने और बुराई से मना करने के लिए दावत, तबलीग़, उपदेश, नसीहत, तालीम, तरबियत और प्रचार-प्रसार के लिए तमाम जाइज़ और पसन्दीदा ज़रीए अपनाए जा सकते हैं। मुस्लिम उम्मत अपने हालात के लिहाज़ से उन सब ज़रीओं को अपनाएगी और अगर हुकूमत और सत्ता हासिल हो तो उसे भी वह इसी मक़सद के लिए इस्तेमाल करेगी। अतएव क़ुरआन मजीद में इसके बारे में लिखा है–

> "ये वे लोग हैं कि अगर हम उनको ज़मीन में सत्ता प्रदान करें तो नमाज़ क़ायम करेंगे, ज़कात देंगे, भलाई का हुक्म देंगे और बुराई से मना करेंगे, और कामों का अन्जाम अल्लाह ही के हाथ में है।" (क़ुरआन, 22:41)

## उम्मत की औरतें इस ज़िम्मेदारी में शरीक हैं

क़ुरआन मजीद का ख़िताब (सम्बोधन) मर्दों और औरतों दोनों से है। मुस्लिम उम्मत पर जो ज़िम्मेदारी डाली गई है उसमें उम्मत की औरतें और मर्द दोनों ही शरीक हैं। इसलिए यह सोचना सही न होगा

कि इसका भार सिर्फ़ मर्दों को उठाना है और औरतें इससे आज़ाद हैं। इससे कतराना और ग़फ़लत बरतना जिस तरह मर्दों के लिए सही नहीं है उसी तरह औरतों के लिए भी सही नहीं है। सच्चाई यह है कि भलाई का हुक्म करना और बुराई से रोकना पूरी उम्मत की ज़िम्मेदारी है। यह ज़िम्मेदारी उसके मर्दों की भी है और औरतों की भी। यह उम्मत की उन विशेषताओं में से है जिनके बग़ैर इसकी कल्पना नहीं की जा सकती और जो उसे दूसरी क़ौमों और जमाअतों से अलग करके एक मुमताज़ (प्रतिष्ठित) और जुदागाना उम्मत की हैसियत प्रदान करती है। अल्लाह फ़रमाता है—

> "ईमानवाले मर्द और ईमानवाली औरतें एक-दूसरे के मददगार हैं। भलाई का हुक्म देते और बुराई से रोकते हैं।"
>
> (क़ुरआन, 9:71)

इस आयत से यह बात साफ़ हो जाती है कि भलाई का हुक्म देने और बुराई से रोकने की बड़ी ज़िम्मेदारियों में मर्द के साथ औरत भी शरीक है और दोनों को मिल-जुलकर इन ज़िम्मेदारियों को पूरा करने की कोशिश करनी चाहिए।

क़ुरआन मजीद ने जो अनेकों प्रकार की सामाजिक ज़िम्मेदारियाँ बयान की हैं उनके अध्ययन से दो बातें बिल्कुल खुलकर सामने आती हैं। एक यह कि अल्लाह के दीन को हर दौर में मर्दों ने भी क़बूल किया है और औरतों ने भी तथा दोनों ही ने इसके लिए हर तरह की क़ुरबानियाँ दी हैं।

दूसरे यह कि समाज के बनाने और बिगाड़ने में औरत बड़ा अहम रोल अदा करती है, इसलिए इस्लामी समाज के बनाने और सँवारने में औरत सबसे ज़्यादा सहायक हो सकती है।

इसके साथ क़ुरआन और हदीस ने यह भी बयान कर दिया है कि समाज में दावत के काम और समाज-सुधार के काम की कोशिश जारी रखना मर्दों की भी ज़िम्मेदारी है और औरतों की भी। दोनों को यह जिद्दोजुहद (कोशिश) अपने-अपने क्षेत्र (दायरे) में ज़रूर करनी चाहिए।

आनेवाले पृष्ठों में इन्हीं विषयों पर हम अलग-अलग बहस करेंगे।

♦ ♦ ♦

# हक़ की राह में औरतों की साबित-क़दमी

इस्लाम सारे इनसानों को अल्लाह की इबादत और फ़रमाँबरदारी की दावत देता है। वह चाहता है कि यह दुनिया कुफ़्र (इनकार), शिर्क (बहुदेववाद) और इलहाद (नास्तिकता) से नजात पाए। अल्लाह के बन्दे उसकी नाफ़रमानी और बग़ावत को छोड़कर उसकी फ़रमाँबरदारी क़बूल कर लें और उसके अच्छे बन्दे बनकर रहें। यहाँ हक़ (सत्य) ग़ालिब हो जाए और बातिल (झूठ) मिट जाए। अल्लाह की ज़मीन पर हर जगह उसी का हुक्म चले और उसकी इबादत के सिवाय किसी दूसरे की ग़ुलामी और इबादत इनसान न करे। यही अल्लाह का वह दीन है जो उसने इनसानों की हिदायत (मार्ग-दर्शन) के लिए हर ज़माने में नाज़िल (अवतरित) किया और उसी की दावत हमेशा उसके पैग़म्बर दुनिया को देते रहे।

## दहकती आग में डाले गए

अल्लाह के दीन (इस्लाम) का खुल्लम-खुल्ला एलान करना और उसपर जमे रहना आसान काम नहीं है। यह बड़ा क़ठिन काम है कि इसकी कल्पना ही से दिल काँप उठता है। यहाँ क़दम-क़दम पर आज़माया जाता है और आदमी के सब्र (धैर्य) और साबित-क़दमी (जमे

रहने) का इम्तिहान होता रहता है। यह रास्ता आसानी से न कभी तय हुआ है और न तय हो सकता है। इसमें हर तरह की कठिनाइयाँ और मुश्किलें आती हैं और कभी-कभी दहकती आग से भी आदमी को गुज़रना पड़ता है। ख़ुदा की रहमत (कृपा) हो उसके उन ख़ास बन्दों पर जो इस ख़तरनाक रास्ते से हँसते-मुस्कराते गुज़र गए। क़ुरआन मजीद ने एक जगह उन हौसलामन्द हस्तियों का ज़िक्र (वर्णन) किया है जो केवल इस जुर्म में कि वे इस ज़मीन व आसमान के मालिक और स्वामी पर ईमान रखते थे, आग के अलाव में ज़िन्दा फेंक दिए गए लेकिन उनकी साबित-क़दमी में कोई कमी न आई। उनमें मर्द भी थे और औरतें भी थीं।

ये ईमानवाले जिन पत्थर-दिल और दरिन्दा सिफ़त (स्वभाव) इनसानों के ज़ुल्म और अत्याचार का निशाना बने क़ुरआन मजीद ने उन्हें 'असहाबुल-उख़दूद' अर्थात 'ख़न्दक़वाले' का नाम दिया है। इससे उस दिल दहला देनेवाली घटना की तस्वीर खिंचकर सामने आ जाती है जो उनके हाथों ईमानवालों के साथ पेश आया। वे दहकती आग में उन्हें ज़िन्दा जलाकर मज़ा ले रहे थे और उस हक़ीक़त को भूल चुके थे कि इस आज के बाद एक कल भी है जबकि उन्हें जहन्नम की आग से सामना करना पड़ेगा, जिससे उनके निकलने की कोई सूरत न होगी। वहाँ कामयाब वही लोग होंगे और अल्लाह की नेमतें उन्हीं लोगों को प्राप्त होंगी जिनके पास ईमान और अमल की दौलत होगी। इसका सविस्तार वर्णन क़ुरआन की निम्न आयतों में है —

> "मारे गए ख़न्दकवाले, ईंधन भरी आग की ख़न्दक़वाले, जबकि वे उसके किनारे बैठे हुए थे। और जो कुछ वे लोग ईमानवालों के साथ कर रहे थे उसे देख रहे थे। उन ईमानवालों से उन्होंने सिर्फ़ इसलिए बदला लिया कि वे उस ख़ुदा पर ईमान लाए थे जो ज़बरदस्त और तारीफ़ (प्रशंसा) के क़ाबिल है, जिसकी बादशाहत आसमानों और ज़मीन पर है

और अल्लाह हर चीज़ को देख रहा है। बेशक जिन लोगों ने ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों पर यह ज़ुल्म किया और तौबा नहीं की उनके लिए जहन्नम का अज़ाब है, और उनके लिए जलने की सज़ा है। जो लोग ईमान लाए और नेक काम किए उनके लिए जन्नत के बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें बहती होंगी। यह है बड़ी कामयाबी।" (क़ुरआन 85:4-11)

## हज़रत नूह *(अलैहि.)* पर ईमान लानेवाले

हज़रत नूह *(अलैहि.)* नौ सौ पचास (950) साल तक अपनी क़ौम में दावत (प्रचार-प्रसार) का काम अन्जाम देते रहे (अल-अनकबूत-14)। सैकड़ों सालों की कोशिश के बाद भी जब वह क़ौम ईमान नहीं लाई तो उन्होंने बद्दुआ की कि ख़ुदाया तू इसे ज़मीन पर से मिटा दे। यह इस लायक़ नहीं है कि इसे दुनिया में बाक़ी रखा जाए, लेकिन इसके साथ जिन थोड़े-से मर्दों और औरतों ने हक़ (सत्य) की राह में उनका साथ दिया उनके लिए दुआ फ़रमाई—

"ऐ मेरे पालनहार, माफ़ फ़रमा दे मुझे, मेरे माँ-बाप को और जो मोमिन (ईमानवाला) होकर मेरे घर में आया है, और ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को, और उन ज़ालिमों की तू हलाकत ही में बढ़ोत्तरी फ़रमा दे।" (क़ुरआन 71:28)

अल्लाह की रहमत (अनुकम्पा) हो उन नेक बन्दों और बन्दियों पर जिन्होंने कठोर विरोध के बावजूद हक़ पर चलते हुए अपने जीवन बिता दिए। ज़रा ग़ौर कीजिए कि उन्हें किन विषम परिस्थितियों से गुज़रना पड़ा होगा और क्या-क्या तकलीफ़ें उन्होंने अपने दीन के लिए उठाई होंगी? इतिहास गवाह है कि हर ज़माने में मर्दों की तरह औरतों ने भी दीने-हक़ (सत्य-धर्म) के लिए क़ुरबानियाँ दी हैं।

## इस्लामी इतिहास गवाही देता है

इसका सुबूत हमें अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* के मुबारक ज़माने से भी मिलता है। दीन की दावत और प्रचार-प्रसार से लेकर इस्लामी-स्टेट के क़ायम होने तक नबी *(सल्ल.)* और जानों पर खेल जानेवाले आप *(सल्ल.)* के साथी *(रज़ि.)* बड़े ही ख़तरनाक और नाज़ुक हालतों से गुज़रे, तरह-तरह की तकलीफ़ें और परेशानियाँ उठाईं, दोस्त उनके दुश्मन बन गए, रिश्ते-नातेदार सब अजनबी हो गए, उन्होंने गालियाँ सुनीं, पत्थर खाए, घर-बार छोड़ा और जान-माल की बेपनाह क़ुरबानियाँ दीं। इन तमाम मामलों में मर्दों के साथ-साथ औरतें भी थीं। दोनों ने मिलकर यह कठिन रास्ता तय किया और—दुआएँ करते हुए आगे बढ़ते रहे कि ऐ ख़ुदा, अभी हक़ अदा नहीं हुआ है, तू हमें माफ़ कर दे। क़ुरआन मजीद ने उन्हें माफ़ी और जन्नत की ख़ुशख़बरी दी। इस दौड़-धूप में मर्दों के साथ औरतें भी शरीक थीं इसलिए यह ख़ुशख़बरी भी दोनों के लिए थी। क़ुरआन में है—

> "उनके पालनहार ने उनकी दुआ क़बूल फ़रमाई कि तुममें से किसी भी अमल करनेवाले के अमल को, चाहे वह मर्द हो या औरत, बरबाद नहीं करूँगा। तुम सब एक-दूसरे से हो। फिर ज़िन्होंने हिजरत की, जो अपने घरों से निकाले गए, जो मेरे रास्ते में सताए गए और लड़े और मारे गए तो मैं उनके गुनाहों को माफ़ कर दूँगा और उनको ऐसे बाग़ों में दाख़िल करूँगा जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। यह अल्लाह की तरफ़ से उनका बदला है, और अल्लाह ही के पास बेहतरीन बदला है।" (क़ुरआन 3:195)

जो मर्द और औरतें दीन की इस दौड़-धूप में शामिल रहीं, कठिन से कठिन मौक़ों पर अल्लाह ने उन्हें साबित-क़दम रखा और दिल के सुकून से नवाज़ा। इसके बग़ैर यह रास्ता तय नहीं हो सकता था। इसके

विपरीत जिन लोगों के दिलों में छल-कपट था वे तरह-तरह की दुविधाओं और बेकार के सन्देहों में ग्रस्त हो गए। वे इस यक़ीन से महरूम थे कि अल्लाह उनकी मदद करेगा। इसी लिए वे दीन की मुहिम में साथ नहीं दे सके। इसकी जीती-जागती मिसाल हुदैबिया की संधि में मिलती है। यह संधि जिन हालतों में हुई और जिन शर्तों के साथ हुई इससे शुरू में बड़ी बेइतमीनानी और बेचैनी पैदा हुई लेकिन अल्लाह ने बहुत जल्द ईमानवालों के दिलों को सुकून से भर दिया। अतएव उन्होंने अल्लाह के रसूल का पूरा-पूरा साथ दिया। मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) बेयक़ीनी की दलदल से निकल नहीं सके, इसलिए ईमानवाले तो माफ़ी और जन्नत के अधिकारी हुए लेकिन मुनाफ़िक़ों और मुशरिकों पर अल्लाह का ग़ज़ब (गुस्सा) नाज़िल हुआ और वे जहन्नम के अधिकारी ठहरे। क़ुरआन मजीद ने इसको इस तरह बयान किया है—

> "वही है जिसने ईमानवालों के दिलों में सकीनत (शान्ति) उतारी, ताकि उनके अन्दर पहले से जो ईमान है उसके साथ उनका ईमान और बढ़ जाए। ज़मीन और आसमान के सारे लशकर अल्लाह ही के हैं और वह इल्म और हिक्मतवाला है ताकि ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को ऐसे बाग़ों में दाख़िल करे जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, जिनमें वे हमेशा रहेंगे और उनके गुनाह उनसे दूर कर दे— और यह अल्लाह के नज़दीक बड़ी कामयाबी है— और मुनाफ़िक़ मर्दों और मुनाफ़िक़ औरतों और मुशरिक मर्दों और मुशरिक औरतों को अज़ाब दे जो अल्लाह के बारे में बुरे-बुरे गुमान रखते हैं। बुराई की लपेट में वे ख़ुद ही आकर रहेंगे। अल्लाह का ग़ज़ब (प्रकोप) हुआ उनपर, उसने उनपर लानत की और उनके लिए जहन्नम तैयार कर रखी है जो बहुत-ही बुरा ठिकाना है।"
>
> (क़ुरआन, 48 : 4-6)

## ईमानवालों के लिए पैग़म्बर दुआ करते हैं

जो लोग पूरे ख़ुलूस से ईमान लाकर दिल-जान से उसपर अमल करते हैं अल्लाह उन्हें दुनिया और आख़िरत (लोक-परलोक) दोनों में अपनी रहमत से नवाज़ता है। एक जगह अल्लाह के रसूल *(सल्ल॰)* को हुक्म हुआ कि आप अल्लाह के उन नेक बन्दों के लिए मग़फ़िरत (गुनाहों से छुटकारे) की दुआ फ़रमाते रहें। अगर उनसे कोई भूल-चूक, ग़लती या अपने दर्जे से कुछ गिरा हुआ अमल हो जाए तो अल्लाह उन्हें माफ़ कर दे। क़ुरआन में है –

> "जान लो कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद (पूज्य) नहीं है, और अपनी ग़लती के वास्ते माफ़ी माँगते रहो और मोमिन मर्दों और मोमिन औरतों के लिए भी मग़फ़िरत की दुआ करते रहो। अल्लाह तुम्हारी सरगर्मियों को भी जानता है और तुम्हारे ठिकाने से भी परिचित है।" (क़ुरआन, 47 :19)

किसी ईमानवाले मर्द या औरत के लिए इससे बड़ी ख़ुशनसीबी और क्या हो सकती है कि अल्लाह के रसूलों और उसके नेक बन्दों की दुआएँ उसे हासिल हों और वह उसकी रहमत और मग़फ़िरत का अधिकारी ठहरे। यह वह दौलत है जिसपर रश्क किया जा सकता है और हर ईमानवाले को रश्क (एक-दूसरे से आगे निकल जाने की होड़) करना चाहिए।

# औरत और समाज-निर्माण

कभी-कभी समाज के बनाने, सुधारने और तरक़्क़ी में औरत की अहमियत महसूस नहीं की जाती और यह ख़याल किया जाता है या कम-से-कम इस तरह का रवैया अपनाया जाता है जैसे समाज केवल मर्द ही के गिर्द घूमता है। उसी की सोच, अमल और दौड़-धूप उसे बनाती और बिगाड़ती है, औरत का इसमें कोई हिस्सा नहीं है। जबकि यह बिल्कुल अर्थहीन और ग़लत ख़याल है। इस बात की कल्पना नहीं की जा सकती कि मानव जाति की आधी आबादी की शिरकत के बग़ैर दुनिया में कोई क्रान्ति (तब्दीली) आ सकती है। इतिहास बताता है कि जीवन-संघर्ष में हमेशा मर्द और औरत एक-दूसरे के सहायक और मददगार रहे हैं, ज़िन्दगी के भारी बोझ को दोनों ने मिलकर उठाया है। दोनों की दौड़-धूप ने सभ्यता और संस्कृति को आगे बढ़ाया है। यहाँ बहुत-से मज़ाहिब (धर्म) वुजूद में आए, दृष्टिकोण और विचार उभरे, सभ्यताएँ पैदा हुईं, इन सबको फैलाने और मज़बूत करने में औरत ने मर्द का हमेशा साथ दिया है। जहाँ तक किसी सोच को नई नस्ल के दिल-दिमाग़ में उतारने, उसके मुताबिक़ उसे ढालने और उसके अन्दर उससे मुहब्बत और उसे बाक़ी रखने की भावना पैदा करने का सम्बन्ध है, औरत ने मर्द से ज़्यादा अहम रोल अदा किया है।

इस्लाम ने समाज-निर्माण में औरत की अहमियत को पूरी तरह नुमायाँ किया है। उसके नज़दीक औरत और मर्द मिल-जुलकर समाज को बनाते या बिगाड़ते हैं। नेक और ख़ुदापरस्त मर्द-औरत

अगर एक-दूसरे के सहायक और मददगार होते हैं और समाज को सुधार और परहेज़गारी के रास्ते पर ले जाना चाहते हैं, तो ग़लतकार और ख़ुदा-फ़रामोश मर्दों और औरतों के बीच भी सहयोग और साझा होता है और वे मिल-जुलकर पूरे समाज को ग़लत सिम्त (दिशा) पर ले जाने की कोशिश करते हैं। समाज अच्छा हो या बुरा औरत और मर्द की साझा कोशिशों से वुजूद में आता है। इसके बग़ैर न तो समाज-सुधार की कल्पना की जा सकती है और न ही बिगाड़ की। इस हक़ीक़त को सूरा तौबा के नवें रुकूअ के अध्ययन से और स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

## समाज के निर्माण में मुनाफ़िक़ मर्दों और औरतों का चरित्र

क़ुरआन ने कहा कि जिन लोगों के दिलों में छल-कपट छिपा हुआ है और जो ईमान और यक़ीन से वंचित हैं ऐसे तमाम मर्द और औरतें एक हैं, एक ही मक़सद के लिए भाग-दौड़ में व्यस्त हैं और पूरे समाज को एक ख़ास रंग में रंग देना चाहते हैं। इसलिए उनकी ज़िन्दगी का जो अन्दाज़ है और वे समाज को जिस दिशा में ले जाना चाहते हैं उसका बयान निम्न शब्दों में किया है :

> "मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतें सब एक जैसे हैं। बुराई का हुक्म देते हैं और भलाई से मना करते हैं और अपने हाथों को बन्द रखते हैं। वे अल्लाह को भूल गए तो अल्लाह ने भी उन्हें भुला दिया। बेशक मुनाफ़िक़ अल्लाह के नाफ़रमान हैं।"
>
> (क़ुरआन, 9:67)

## उनके अन्जाम में समानता

बुराइयों का प्रचार-प्रसार करते फिरना, नेकी और भलाई से लोगों को बाज़ रखने की कोशिश करना, ख़ुदा की मख़लूक़ (बन्दों) के साथ संगदिली और बेरहमी की नीति अपनाना, किसी भी अच्छे काम में आगे

न बढ़ना और ख़ुदा को भूलकर जीवन बिताना किसी ईमानवाले इनसान का तरीक़ा नहीं हो सकता। यह ख़ुदा के इनकारियों और बाग़ियों का चलन है, इसलिए मुनाफ़िक़ों के ईमानी-दावे के बावजूद उनका भी वही अन्जाम होगा जो ख़ुदा के नाफ़रमानों और बाग़ियों का होगा। अल्लाह का फ़रमान है–

"अल्लाह ने मुनाफ़िक़ मर्दों और मुनाफ़िक़ औरतों और काफ़िरों के लिए जहन्नम की आग का वादा किया है। उसमें वे हमेशा रहेंगे। वह उनके लिए काफ़ी है। उनपर अल्लाह की लानत है और उनके लिए हमेशा रहनेवाला अज़ाब है।" (क़ुरआन, 9:68)

## मोमिन मर्दों और मोमिन औरतों की विशेषताएँ

इसके बाद उन मर्दों और औरतों का हाल बयान किया गया है जो अपने ईमान में मुख़लिस हैं और जिनके दिलों में ख़ुदा का डर और आख़िरत का यक़ीन है। इससे ज़ाहिर होता है कि उनके जीवन विशेष गुणों से सुसज्जित होते हैं और उनके चरित्र व व्यवहार में बड़ी समानता और सामंजस्य पाया जाता है। क़ुरआन में है–

"ईमानवाले मर्द और ईमानवाली औरतें एक-दूसरे के मददगार हैं, भलाई का हुक्म देते हैं और बुराई से रोकते हैं, नमाज़ क़ायम करते और ज़कात देते हैं, और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत (पैरवी) करते हैं। ये वे लोग हैं जिनपर अल्लाह ज़रूर रहम करेगा। बेशक अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) और हिक्मतवाला (तत्त्वदर्शी) है।" (क़ुरआन 9 : 71)

## मोमिनों और मुनाफ़िक़ों की विशेषताओं का विश्लेषण

पहले मुनाफ़िक़ों के व्यक्तिगत और सामूहिक चरित्र को बयान किया गया था। अब ईमानवालों की सीरत व किरदार (चरित्र) को बयान किया गया है। इसका थोड़ा सा विश्लेषण भी यह जानने के लिए

काफ़ी है कि इन दोनों का क्या क़िरदार है और वे समाज को किस तरफ़ ले जाना चाहते हैं।

1. मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मर्दों और औरतों के बारे में पहली बात यह कही गई कि "वे एक जैसे हैं" और ईमानवालों को कहा गया कि "वे एक-दूसरे के दोस्त और साथी" हैं। इसमें उस बात की तरफ़ इशारा है कि मुनाफ़िक़ यूँ तो अपने स्वभाव, मानसिकता और मक़सद के लिहाज़ से एक हैं, लेकिन उनमें प्यार-मुहब्बत, ख़ैरख़ाही, हमदर्दी, वक़्त ज़रूरत सरपरस्ती और मदद व हिमायत की वह भावना नहीं है जो किसी गरोह को संगठित और एक मत रखती है और अपने मक़सद में कामयाब बनाती है। जब वे अपने ही जैसा मक़सद रखनेवाले लोगों के साथ हमदर्दी का व्यवहार नहीं अपना सकते तो दूसरों के साथ क्या कर सकते हैं? इसके विपरीत दीन के सम्बन्ध ने ईमानवालों को एक-दूसरे का हमदर्द और ख़ैरख़ाह बना दिया है। उनके मर्दों और औरतों के अन्दर एक-दूसरे की मदद और सहयोग की भावनाएँ पाई जाती हैं।

2. मुनाफ़िक़ मर्दों और औरतों के बारे में दूसरी बात यह कही गई है कि वे बुराई का हुक्म देते और अच्छाई से रोकते हैं। इसके विपरीत ईमानवाले मर्दों और औरतों के बारे में कहा कि वे भलाई का हुक्म देते और बुराई से रोकते हैं। इन वाक्यों के कोई सीमित अर्थ नहीं हैं, बल्कि ये अपने अन्दर बड़ा व्यापक अर्थ रखते हैं। इसको स्पष्ट करने के लिए हम इन वाक्यों की उस व्याख्या का उल्लेख करते हैं जो क़ुरआन केदो बड़े टीकाकारों ने की है। अल्लामा इब्ने-जरीर तबरी *(रह.)* मुनाफ़िक़ मर्दों और औरतों के बारे में लिखते हैं—

> "जो उनकी बात माने उसे वे बुराई का हुक्म देते हैं, मुनकर (बुराई) से मुराद है अल्लाह का, मुहम्मद *(सल्ल.)* का और जो शिक्षाएँ आप *(सल्ल.)* अल्लाह के पास से लाए हैं उनका इनकार और झुठलाना। वे भलाई से रोकते हैं। यानी

अल्लाह और उसके रसूल *(सल्ल.)* पर और जो शिक्षाएँ आप *(सल्ल.)* अल्लाह के पास से लाए हैं उनपर ईमान से रोकते हैं।"

मोमिन मर्दों और मोमिन औरतों के बारे में लिखते हैं :

"उनकी ख़ूबी यह है कि वे एक-दूसरे के मददगार हैं। भलाई का हुक्म देते हैं। यानी लोगों को अल्लाह और उसके रसूल *(सल्ल.)* पर और जो दीन आप *(सल्ल.)* अल्लाह की तरफ़ से लाए हैं उसपर ईमान का हुक्म देते हैं।" (तफ़्सीर इब्ने-जरीर)

अल्लामा बग़वी फ़रमाते हैं :

"मुनाफ़िक़ 'मुनकर' (बुराई) का, यानी शिर्क और गुनाह का हुक्म देते हैं। 'मारूफ़' (भलाई) से यानी ईमान और फ़रमाँबरदारी से रोकते हैं..... ईमानवाले 'मारूफ़' (भलाई) का यानी ईमान, इताअत और अच्छे कामों का हुक्म देते हैं। 'मुनकर' (बुराई) से यानी शिर्क से, गुनाह से और उन तमाम बातों से जो दीन में जानी पहचानी नहीं हैं मना करते हैं।"

(मुआलिमुत्तन्ज़ील)

मतलब यह कि मुनाफ़िक़ कुफ़्र, शिर्क और बेदीनी का समाज में चर्चा करते हैं, अल्लाह और रसूल *(सल्ल.)* की नाफ़रमानी और गुनाह पर उभारते हैं। नेकी, परहेज़गारी और अख़्लाक़ के रास्ते में रुकावट डालते हैं और बद-अख़्लाक़ी और बद-किरदारी के फैलाने में अपनी पूरी ताक़त लगाते हैं। मुनाफ़िक़ तो ये कारनामे अन्जाम देते फिरते हैं, लेकिन अल्लाह के वे बन्दे जिनके अन्दर उसका डर और आख़िरत का यक़ीन है वे ईमान और इस्लाम की दावत देते हैं, इबादत व इताअत की और परहेज़गारी व पाकीज़गी की तबलीग़ (प्रचार-प्रसार) करते हैं। बद-अख़्लाक़ी और बेहयाई से, अल्लाह की बग़ावत और नाफ़रमानी से

और उन सभी बातों से जिनके लिए कोई दीनी और अख़लाक़ी तौर पर जाइज़ होने की वजह नहीं है, दुनिया को रोकते हैं। गोया एक तरफ़ अल्लाह के दीन के मुताबिक़ समाज के बनाने-सुधारने की कोशिश होती है और दूसरी तरफ़ इसके बिल्कुल विपरीत समाज को दीन से फेरने की कोशिश की जाती है। इस पूरी कोशिश में मर्द और औरत दोनों शरीक होते हैं और अपना-अपना पार्ट अदा करते हैं। इस तरह क़ुरआन मजीद ने यह बात साफ़ कर दी है कि समाज के बनाव और बिगाड़ से औरत का गहरा सम्बन्ध है और वह इसके बनाने और बिगाड़ने में बड़ा अहम रोल अदा करती है।

3. मुनाफ़िक़ों के बारे में तीसरी बात यह कही गई है कि उनके मर्द और औरतें सभी अल्लाह को भूले हुए हैं ग़फ़लत व बेख़बरी का जीवन बिता रहे हैं। इसके प्रतिकूल ईमानवालों की ख़ूबी यह बयान की गई है कि वे नमाज़ पढ़ते हैं। मतलब यह कि वे अल्लाह को हर वक़्त याद करते हैं, उससे निर्भय (निडर) होकर या उसे भूलकर ज़िन्दगी नहीं गुज़ारते।

4. मुनाफ़िक़ों के बारे में चौथी बात यह कही गई कि 'वे अपने हाथों को बन्द रखते हैं'। मतलब यह कि वे बहुत ही कंजूस होते हैं। न तो ख़ुदा के रास्ते में ख़र्च करते हैं और न उसके बन्दों की ज़रूरतों ही में काम आते हैं। सदक़ा-ख़ैरात और अच्छे कामों में ख़र्च के जज़्बे (भाव) से उनका सीना ख़ाली है। इसके अर्थ में यह बात भी शामिल है कि वे किसी भी भलाई के काम में आगे नहीं बढ़ते बल्कि इससे नाख़ुशी और मलिनता महसूस करते हैं। मुनाफ़िक़ों की ख़ास सिफ़त यह थी कि उनकी दौलत बदी के रास्तों में तो ख़र्च हो सकती थी लेकिन भलाई के कामों में कभी ख़र्च नहीं हो सकती थी। इसके विपरीत ईमानवालों के बारे में कहा गया कि "वे ज़कात देते हैं।" नमाज़ जिस तरह ख़ुदा से सम्बन्ध को ज़ाहिर करती है, उसी तरह 'ज़कात' अल्लाह के बन्दों से हमदर्दी की निशानी है। ज़कात देनेवाले इनसान से यह उम्मीद की जा

सकता है कि वह दूसरों के दुख-दर्द में काम आएगा और उनपर अपना माल ख़र्च करेगा। अल्लामा इब्ने-कसीर ने इन दोनों ख़ूबियों (गुणों) की व्याख्या इस प्रकार की है–

"(वे नमाज़ क़ायम करते और ज़कात देते हैं) यानी अल्लाह की इताअत करते हैं और उसके बन्दों के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं।" (तफ़सीर इब्ने-कसीर : 2/369)

दूसरे शब्दों में यूँ कहा जा सकता है कि ख़ुदा से सम्बन्ध और उसके बन्दों से अच्छा व्यवहार और उनकी ख़िदमत (सेवा) ईमानवाले मर्दों और औरतों की एक नुमायाँ ख़ूबी है।

5. मुनाफ़िक़ों के बारे में पाँचवीं बात यह कही गई है कि वे फ़ासिक़ हैं। यानी अल्लाह के नाफ़रमान और उसकी हदों (सीमाओं) के तोड़नेवाले हैं। ईमानवालों के बारे में बताया गया कि वे अल्लाह और उसके रसूल की इताअत (फ़रमाँबरदारी) करते हैं। उनके हर हुक्म के सामने अपने सिर झुका देते हैं और ख़ुशी-ख़ुशी दिल से उसपर अमल करते हैं। वे सिर्फ़ ज़बान ही से नहीं बल्कि अपने अमल से भी ताबेदार और फ़रमाँबरदार हैं।

इसी तरह क़ुरआन मजीद ने ईमानवाले मर्दों और औरतों की ख़ूबियाँ भी बयान कर दीं और उन मर्दों और औरतों का किरदार भी साफ़-साफ़ बता दिया जिनके दिलों में खोट है या जो ख़ुदा के इनकारी और बाग़ी हैं। इससे साफ़ मालूम होता है कि उनमें से कौन समाज को किस तरफ़ ले जाना चाहता है और उसकी दौड़-धूप और कोशिशों की आख़िरी मंज़िल क्या है?

## ईमानवाले मर्द और औरतें कामयाब हैं

ऊपर मुनाफ़िक़ों के नापाक और गन्दे अवगुणों का बयान करने के बाद उनके बुरे परिणाम का वर्णन हुआ है। यहाँ ईमानवालों के पवित्र

गुण और उच्च चरित्रों के वर्णन के बाद उनके आख़िरत के अन्जाम का ज़िक्र (वर्णन) हुआ है। क़ुरआन में है–

> "अल्लाह ने ईमानवाले मर्दों और औरतों से ऐसी जन्नतों का वादा किया है जिनके नीचे नहरें बहती होंगी। उनमें वे हमेशा रहेंगे और पाकीज़ा (पवित्र) मकानों का भी (वादा किया है), हमेशा रहनेवाले बाग़ों में। और अल्लाह की ख़ुशनूदी (प्रसन्नता) तो बहुत बड़ी चीज़ है। यही बड़ी कामयाबी है।"
>
> (क़ुरआन, 9 : 72)

## तदधिक व्याख्या

इस तरह क़ुरआन मजीद ने इन आयतों में एक तरफ़ ईमानवाले मर्दों और औरतों की ख़ूबियाँ बयान की हैं तो दूसरी तरफ़ उन मर्दों और औरतों का चरित्र स्पष्ट किया है जिनके दिलों में खोट है या जो ख़ुदा के इनकारी और बाग़ी हैं। इसके साथ ही उनका अन्जाम भी बता दिया कि कौन कामयाब होनेवाला है और किसके हिस्से में नाकामी आनेवाली है। इन आयतों में कुछ नुमायाँ ख़ूबियों के ज़रीए जो हक़ीक़त समझाई गई है, क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों में इसे और ज़्यादा स्पष्ट किया गया है।

## कुछ संयुक्त विशेषताएँ

इस्लाम एक ऐसे समाज का निर्माण करता है जिसमें दीन और अख़्लाक़ पर बने रहना आसान और उससे बग़ावत करना कठिन हो जाए। अनैतिकता और पथभ्रष्टता में ग्रस्त होने की सम्भावनाएँ कम-से-कम हों। अपने चाल-चलन को ठीक रखने और उसे अच्छे-से-अच्छा बनाने के अवसर अधिक हों। समाज के इस निर्माण में वह औरत और मर्द दोनों को शरीक (शामिल) करता है और उनकी मदद और सहायता को ज़रूरी समझता है। इस सिलसिले में उसने जो

हिदायतें दी हैं वे दोनों ही के लिए हैं, लेकिन कुछ मौक़ों पर उसने उनसे अलग-अलग भी ख़िताब (सम्बोधन) किया है। नीचे इस तरह की एक दो मिसालें पेश की जा रही हैं।

क़ुरआन की सूरा-24, अन-नूर में इस्लाम की सामाजिक व्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर बहस की गई है। इस व्यवस्था में पवित्रता और सच्चरित्रता को केन्द्रीय महत्व प्राप्त है। इसको बचाने और सुरक्षित रखने के लिए औरत और मर्द दोनों को नज़रें नीची रखने का हुक्म दिया गया है। क़ुरआन में है—

> "ईमानवालों से कह दो कि वे अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों (गुप्तांगों) की हिफ़ाज़त करें। यह ज़्यादा पाक है उनके लिए। बेशक अल्लाह ख़बर रखता है उन कामों की जो ये करते हैं। और ईमानवाली औरतों से (भी) कह दो कि वे अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें।" (क़ुरआन, 24: 30-31)

इस्लाम चाहता है कि पूरी सोसाइटी में लोगों के प्रति अच्छे विचारों और एक दूसरे पर भरोसे का वातावरण बने, किसी की इज़्ज़त और आबरू तथा सतीत्त्व पर हमले न हों, किसी पर कीचड़ न उछाली जाए और किसी को बदनाम और ज़लील (निंदित) करने की कोशिश न हो। इफ़्क[1] (मिथ्यारोपण) वाली घटना के सिलसिले में मुनाफ़िक़ों की तरफ़

---

[1] इफ़्क (मिथ्यारोपण) की घटना का सारांश यह है कि अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* एक लड़ाई (ग़ज़वा. बनी-मुस्तलिक़) में अपनी एक पत्नी हज़रत आइशा *(रज़ि.)* को अपने साथ ले गए। वापसी में रात को एक जगह क़ाफ़िला ठहरा। कुछ देर आराम के बाद फिर क़ाफ़िले की रवानगी का हुक्म हुआ— लेकिन हज़रत आइशा *(रज़ि.)* कुछ दूर शौच के लिए गई हुई थीं। जब वापस हुईं तो उन्हें ख़याल आया कि जो हार वे पहने हुई थीं वह टूट कर कहीं गिर पड़ा है। वे उसकी तलाश में वहीं पहुँची जहाँ शौच के लिए गई थीं। उधर जिस हौदज में वे सफ़र कर रही थीं उसे क़ाफ़िलेवालों ने ऊँट पर रखा और क़ाफ़िला रवाना हो गया। उन्हें इसका आभास भी नहीं हुआ कि वह हौदज में नहीं हैं। हज़रत

से वातावरण को ख़राब करने की कोशिश की गई और कुछ अच्छे मुसलमान भी इससे प्रभावित हो गए। इसपर क़ुरआन ने चेतावनी दी। यह चेतावनी ईमानवाले मर्दों और औरतों दोनों ही को थी।

फ़रमाया गया–

"ऐसा क्यों नहीं हुआ कि जब तुमने यह सुना तो ईमानवाले मर्द और ईमानवाली औरतें अपने लोगों के बारे में अच्छा ख़याल करते और यह कहते कि यह तो खुला झूठ है।" (क़ुरआन, 24 :12)

इसी सिलसिले में आगे एक और जगह कहा गया–

"जब तुम्हारी ज़बानें उसे एक-दूसरे से नक़ल कर रही थीं और तुम अपने मुँह से ऐसी बात बोल रहे थे जिसका तुम्हें ज्ञान नहीं था और तुम उसे बहुत हल्की बात समझ रहे थे

---

आइशा *(रज़ि.)* जब वपिस हुईं तो क़ाफ़िला जा चुका था। उन्होंने फ़ैसला किया कि उन्हें इसी जगह रुकना चाहिए जहाँ वे ठहरी थीं, इसलिए कि लोग तलाश करने उन्हें यहीं आएँगे। वहीं बैठे-बैठे उनकी आँख लग गई और वे लेट गईं। क़ाफ़िले में हज़रत सफ़वान-बिन-मुअत्तल *(रज़ि.)* भी शरीक थे। उन्हें यह हिदायत थी कि क़ाफ़िला रवाना होने के बाद वे दिन निकलनें तक वहीं रहें और कोई सामान वग़ैरह रह जाए तो उसे अपने साथ लेते आएँ। उन्होंने सुबह जब देखा कि हज़रत आइशा *(रज़ि.)* लेटी हुई हैं तो उनकी ज़बान से यकायक 'इन्ना लिल्लाहि' निकला। इससे हज़रत आइशा *(रज़ि.)* की भी आँख खुल गई। हज़रत सफ़वान *(रज़ि.)* ने चुप-चाप ऊँट हज़रत आइशा *(रज़ि.)* के पास बिठा दिया ताकि वे सवार हो जाएँ। जब वे सवार हो गईं तो वे ऊँट को हाँककर क़ाफ़िले तक ले आए। उन्होंने यह भी गवारा न किया कि ऊँट पर ख़ुद भी सवार हो जाएँ बल्कि पैदल ही चलते रहे और रास्ते भर हज़रत आइशा *(रज़ि.)* से कोई बात भी नहीं की। इन हज़रात के क़ाफ़िले में पहुँचने पर मुनाफ़िक़ों को, जो इस तरह के मौक़े की तलाश में बराबर लगे रहते थे, एक मौक़ा हाथ आ गया। उन्होंने कानाफूसियाँ शुरू कर दीं। इसमें कुछ सीधे-सीधे स्वभाव के मुसलमान भी शरीक हो गए। अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* हज़रत आइशा *(रज़ि.)* और सभी मुसलमानों को इस बात से बहुत सख़्त तकलीफ़ पहुँची। क़ुरआन मजीद ने इस सूरा में हज़रत आइशा *(रज़ि.)* की बेगुनाही और पाक दामनी का एलान किया और मुसलमानों को कुछ हुक्म दिए। (इस घटना को और विस्तार से जानने के लिए देखें– बुख़ारी, किताबुत्तफ़सीर सूरा- नूर)

जबकि यह अल्लाह के नज़दीक बड़ी बात थी। ऐसा क्यों नहीं हुआ कि जब तुमने यह सुना तो कहते कि हमारे लिए तो इसका मुँह से निकालना भी सही नहीं है। पाक है अल्लाह, यह तो बड़ा 'बुहतान' है। अल्लाह तुम्हें नसीहत करता है कि फिर कभी तुम ऐसी हरकत न करो अगर तुम ईमानवाले हो।" (क़ुरआन, 24 : 15-17)

## मुनाफ़िक़ समाज को बिगाड़ने की कोशिश न करें

इस्लाम समाज को जो बुलन्दी और पाकीज़गी प्रदान करना चाहता था उसे मुनाफ़िक़ बहुत नापसन्द करते थे। वे जिस नैतिक पतन में ग्रस्त थे, पूरे समाज को भी उसी पस्ती में देखना चाहते थे इसके लिए वे नए-नए बखेड़े खड़े करते, अफ़वाहें उड़ाते, गन्दी-गन्दी बातें फैलाते और सीधी-साधी शरीफ़ औरतों से छेड़-छाड़ करते थे। क़ुरआन मजीद ने दुनिया और आख़िरत में इसके बुरे नतीजों से उन्हें आगाह किया।

कहा गया—

"जो लोग चाहते हैं कि ईमानवालों में बेहयाई का चर्चा हो उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दर्दनाक अज़ाब है। और अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते।"

(क़ुरआन, 24 : 19)

## बुरे लोगों के लिए बुरे जोड़े, नेक लोगों के लिए नेक जोड़े

इसी के तहत यह मनोवैज्ञानिक तथ्य भी स्पष्ट किया गया कि किसी भी व्यक्ति का रुझान या झुकाव उन्हीं लोगों की तरफ़ होता है जो उसके सहमत और हम ख़याल हों। बुरे लोग अपने ही जैसे बुरे लोगों से क़रीब होते हैं और जन लोगों में नेकी और शराफ़त होती है वे नेक और शरीफ़ इनसानों से निकटता और लगाव महसूस करते हैं। यही सोच और मानसिकता औरत और मर्द के सम्बन्धों के पीछे भी काम

करती है। बुरे मर्द का झुकाव बुरी औरत की तरफ़ और बुरी औरत का लगाव बुरे मर्द की तरफ़ होता है। इसी तरह नेक मर्दों और नेक औरतों के बीच भी एक तरह की स्वभाव और रुचि सम्बन्धी अनुकूलता होती है। इसी बुनियाद पर उनके बीच सम्बन्ध भी क़ायम (स्थापित) होते हैं। क़ुरआन में कहा गया—

> "ख़बीस औरतें ख़बीस मर्दों के लिए और ख़बीस मर्द ख़बीस औरतों के लिए होते हैं, पाक औरतें पाक मर्दों के लिए और पाक मर्द पाक औरतों के लिए होते हैं। ये उन गन्दी बातों से पाक हैं जो ये कह रहे हैं, इनके लिए तो मग़फ़िरत (मोक्ष) और इज़्ज़त की रोज़ी है।" (क़ुरआन, 24 : 26)

मतलब यह कि जो अफ़वाहें मुनाफ़िक़ों की तरफ़ से फैलाई जा रही हैं, सोचना चाहिए कि क्या वे महान् और पवित्र हस्तियों के जीवन चरित्र से कुछ भी मेल खाती हैं? क्या खुदा के पैग़म्बर *(सल्ल.)* के शादी के बन्धन में (अल्लाह की पनाह) कोई गन्दी और नापाक औरत बँध सकती है? इसी तरह क्या कोई बदकार और बदचलन औरत किसी नेक और परहेज़गार इनसान से शादी कर सकती है? और इससे भी आगे बढ़कर क्या वह ख़ुदा के पैग़म्बर से शादी कर सकती है? और इससे भी आगे बढ़कर क्या वह ख़ुदा के पैग़म्बर से शादी कर सकती है?

ये सूरा नूर की आयतें हैं। सूरा अहज़ाब में भी यह विषय बहस में आया है। मुनाफ़िक़ जिस तरह की गन्दी बातें और अश्लील हरकतें करते थे, उससे अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* को बहुत तकलीफ़ पहुँचती थी। यह कोई मामूली बात न थी। अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* को तकलीफ़ पहुँचाना हक़ीक़त में अल्लाह को तकलीफ़ पहुँचाना है। यह दुनिया और आख़िरत में अल्लाह की रहमत से दूरी और दर्दनाक अज़ाब का सबब है। कहा गया –

"बेशक जो लोग अल्लाह और उसके रसूल को कष्ट देते हैं अल्लाह उन पर लोक-परलोक में लानत करता है और उनके लिए उसने ज़लील (रुसवा) कर देनेवाला अज़ाब तैयार कर रखा है।" (क़ुरआन, 33:57)

मुनाफ़िक़ों की इन हरकतों से ईमानवाले मर्द और औरतें सभी सख़्त तकलीफ़ महसूस कर रहे थे। क़ुरआन मजीद ने उन मुनाफ़िक़ों से कहा कि तुम अपनी इन हरकतों से कोई भलाई का काम नहीं कर रहे हो बल्कि 'खुला गुनाह' कर रहे हो—

"जो लोग ईमानवाले मर्दों और ईमानवाली औरतों को, बग़ैर इसके कि उन्होंने कुछ किया हो, कष्ट (तकलीफ़) पहुँचाते हैं वे बोहतान और खुला गुनाह करते हैं।" (क़ुरआन, 33 :58)

इसके बाद उन्हें धमकी दी गई है कि अगर वे अपनी हरकतों से बाज़ नहीं आए और समाज के नैतिक वातावरण को ख़राब करने का षड्यन्त्र रचते रहे और खुदा पर यक़ीन रखनेवाले और सुचरित्र लोगों को इसी तरह तकलीफ़ पहुँचाने का सिलसिला जारी रखा तो राज्य (हुकूमत) में उन्हें जो अम्न-व-अमान मिला हुआ है वह ख़त्म हो जाएगा तथा उनके ख़िलाफ़ सख़्त बरताव किया जाएगा। क़ुरआन में है :

"अगर ये मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) और वे लोग जिनके दिलों में रोग है और मदीना में अफ़वाहें फैलानेवाले अपनी हरकतों से बाज़ न आए तो हम ज़रूर तुम्हें उनपर मुसल्लत कर देंगे। फिर ये लोग आपके पास थोड़े ही रह पाएँगे और वे भी फिटकारे हुए? जहाँ कहीं वे पाए जाएँगे पकड़े जाएँगे और बुरी तरह मारे जाएँगे। अल्लाह का यही दस्तूर (क़ानून) रहा है और अल्लाह के इस दस्तूर में कोई उलट-फेर नहीं पाएँगे।" (क़ुरआन, 33 : 61-62)

## ईमानवाले एक-दूसरे का मज़ाक न उड़ाएँ

हर आदमी को अपनी इज़्ज़त प्यारी होती है। वह नहीं चाहता कि कोई उसे हिक़ारत की नज़र से देखे और उसे मज़ाक का विषय बनाया जाए। लेकिन कुछ लोगों को उनका घमण्ड उन्हें दूसरों के आदर-सम्मान से रोके रखता है। उनके निकट किसी की इज़्ज़त और सम्मान की कोई अहमियत नहीं होती और वे बड़ी आसानी से उसका उपहास करने और मज़ाक उड़ाने लगते हैं। यह एक ख़तरनाक बीमारी है। जो व्यक्ति इस बीमारी से ग्रसित हो उसके सम्बन्ध बहुत जल्द दूसरों से ख़राब होने लगते हैं। समाज में प्यार-मुहब्बत और एक-दूसरे के आदर-सम्मान का वातावरण ख़त्म होता चला जाता है। यह बीमारी मर्दों में जितनी होती है, औरतों में उससे कम नहीं होती बल्कि कुछ ज़्यादा ही होती है। क़ुरआन मजीद ने दोनों को इससे मना किया है। कहा गया—

> "ऐ ईमानवालो! न तो मर्द एक-दूसरे का मज़ाक उड़ाएँ, हो सकता है कि वे उनसे बेहतर हों और न औरतें औरतों का मज़ाक उड़ाएँ; हो सकता है कि वे उनसे बेहतर हों। एक-दूसरे पर लान-तान न करो और न बुरे नामों से पुकारो। ईमान के बाद दुराचार में नाम पैदा करना बहुत बुरी बात है। जो लोग इन बातों से बाज़ न आएँ वही लोग ज़ालिम हैं।"
>
> (क़ुरआन, 49 : 11)

इन मिसालों से यह बात साफ़ हो जाती है कि औरत के सहयोग और मदद से ही अख़लाक़, परहेज़गारी और पाकीज़गी का वातावरण पैदा हो सकता है, समाज में भलाइयों का विकास उसी वक़्त मुमकिन है जबकि औरत और मर्द एक-दूसरे की मदद और सहयोग करें। इसके बग़ैर सही अर्थों में एक इस्लामी समाज न तो वुजूद में आ सकता है और न ही बाक़ी रह सकता है।

# मुसलमान औरतों की दावती ज़िम्मेदारियाँ

पिछले पृष्ठों में जिन विषयों पर बहस की गई है उनकी रौशनी में इस सच्चाई से इनकार नहीं किया जा सकता कि अल्लाह के दीन की दावत देना और समाज का सुधार करना जिस तरह मुस्लिम उम्मत के मर्दों की ज़िम्मेदारी है उसी तरह उसकी औरतों की भी ज़िम्मेदारी है। एक मुसलमान औरत समाज के सुधार और बिगाड़ से न तो अलग रह सकती है और न ही उसे वास्तव में रहना चाहिए। वह अपनी ताक़त भर भलाई फैलाने और बुराई रोकने की ज़िम्मेदारी अदा करेगी और समाज को बनाने और सँवारने की भरपूर कोशिश करेगी। अलबत्ता मक़सद में साझा होने के बावजूद औरत और मर्द के दायरे (कार्यक्षेत्र) अलग-अलग होंगे और वे उन सीमाओं के अन्दर काम करेंगे जो अल्लाह और उसके रसूल *(सल्ल.)* ने तय कर दी हैं।

## शौहर और बच्चों का अधिकार सबसे पहले है

औरत जिन क्षेत्रों में यह फ़र्ज़ अन्जाम देगी और जिस तरह अन्जाम देगी, आगे उसे एक तरतीब के साथ पेश किया जा रहा है। औरत का सीधे तौर पर और क़रीबी सम्बन्ध उसके शौहर और बच्चों से होता है। इसलिए उनका अधिकार सबसे पहले है। सबसे पहले उसे उन्हीं के बीच अपने दावती कामों को अन्जाम देना चाहिए।

## शौहर-बीवी के सम्बन्धों की स्थिति

मियाँ-बीवी के बीच अल्लाह ने ग़ैर-मामूली मुहब्बत और कशिश रखी है। उनका वुजूद एक-दूसरे के लिए सुकून और चैन का सबब होता है। वे एक-दूसरे के दुख-सुख में बराबर के शरीक होते हैं। उनमें से हर एक-दूसरे की कमज़ोरियों और ख़ूबियों से अच्छी तरह परिचित होता है। उसकी कोताहियों को सहन भी करता है और ख़ूबियों से फ़ायदा भी उठाता है। फिर यह कि जीवन की भाग-दौड़ में वे एक-दूसरे के लिए इस तरह ज़रूरी हो जाते हैं कि उनमें से कोई भी दूसरे को अलग करके किसी मसले पर नहीं सोचता। क़ुरआन मजीद ने मियाँ-बीवी के सम्बन्धों को ज़ाहिर करने के लिए कितना अच्छा ढंग अपनाया है।

"वे तुम्हारे लिए लिबास हैं और तुम उनके लिए लिबास हो।"

(क़ुरआन, 2:187)

## बीवी के सहयोग की अहमियत

औरत, मर्द की सहयोगी और मददगार है। वह कुफ़्र और शिर्क में भी उसका सहयोग कर सकती है और इस्लाम के लिए भी उसका सहयोग हो सकता है। उसके इस सहयोग की बड़ी अहमियत है और इसके दूरगामी नतीजे निकलते हैं। औरत चाहे तो एक ग़लतकार शौहर को उसकी ग़लतकारी में इस हद तक पहुँचा सकती है कि उसके लिए वापसी मुश्किल हो जाए। इसी तरह वह चाहे तो दीन के मामले में भी मर्द के मज़बूत जमाव का सबब बन सकती है।

पहली मिसाल अबू-लहब की बीवी की है। अबू-लहब, अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* का बहुत बड़ा दुश्मन था। आप *(सल्ल.)* को सख़्त से सख़्त तकलीफ़ें पहुँचाता था। आप *(सल्ल.)* को सताने और परेशान करने में उसको बहुत मज़ा आता था। उसकी बीवी इस मामले में उसकी सबसे बड़ी सहयोगी और मददगार थी। वह आप *(सल्ल.)* के ख़िलाफ़ जो

साज़िश रचता और जो क़दम भी उठाता उसका समर्थन उसे हासिल होता। अबू-लहब को अपनी दौलत पर भी बड़ा घमण्ड था। यह दौलत उसके पास बहुत ही नापाक और हराम ज़रीओं से आती थी। इसके जमा करने में भी उसकी बीवी का हाथ रहता था। एक दुनियादार और लालची औरत की तरह वह हराम-हलाल हर तरीक़े से दौलत समेटने की तरफ़ उसे उकसाती और उभारती रहती थी। किसी अच्छे-भले मक़सद में ख़र्च करने से उसे रोकती रहती थी। नतीजा यह निकला कि वह दीन की मुख़ालिफ़त में आगे बढ़ता ही चला गया। अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* से उसकी रिश्तेदारी थी। लेकिन इस रिश्ते और सम्बन्ध का भी उसने कोई लिहाज़ न रखा और अख़लाक़ और शराफ़त की सारी सीमाएँ तोड़ डालीं। उसकी बीवी ने न सिर्फ़ यह कि इस ग़लत काम से उसे नहीं रोका बल्कि इसमें उसकी हिम्मत बढ़ाती रही और ग़लत कामों तथा ग़ैर शरीफ़ाना हरकतों में उसकी संरक्षक बनी रही। वह जहन्नम में जा रहा था तो यह उसके लिए ईंधन जमा कर रही थी। क़ुरआन मजीद ने कहा है कि आज यह जिस दौलत पर इतरा रही है कल वह इसके कुछ काम न आएगी और वह ज़लील और अपमानित होकर अपने शौहर के साथ जहन्नम में जाएगी। कहा गया—

> "टूट गए अबू-लहब के हाथ और वह तबाह हुआ। उसका माल और जो कुछ उसने कमाया वह उसके कुछ काम न आया। अब वह दहकती हुई आग में जाएगा और उसकी बीवी भी, लकड़ियों का गट्ठर उठाए हुए। उसकी गर्दन में खजूर की छाल की रस्सी पड़ी होगी।" (क़ुरआन, 111, 1-5)

दूसरी मिसाल हज़रत ख़दीजा *(रज़ि.)* की है। अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* के नबी बनाए जाने के बाद सबसे पहले इस्लाम क़बूल किया, अपना माल-दौलत सब कुछ दीन के लिए क़ुरबान कर दिया। इस रास्ते में जो तकलीफ़ें आईं ख़ुशी-ख़ुशी उन्हें सहन किया, कठिन से कठिन

हालतों में भी सब्र और साबित-क़दमी का सुबूत दिया। बाहर की दुनिया में अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* की बहुत सख़्त मुख़ालिफ़त होती थी, लेकिन घर के अन्दर हज़रत ख़दीजा *(रज़ि.)* आप *(सल्ल.)* की दिलजोई और तस्कीन का सामान जुटाती थीं और हर तरह से आप *(सल्ल.)* की हिम्मत बढ़ाती थीं। इतिहास में हज़रत ख़दीजा *(रज़ि.)* का नाम अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* की बेहतरीन जीवन-संगिनी और दीन के रास्ते में बेहतरीन सहयोगी की हैसियत से हमेशा के लिए महफ़ूज़ (सुरक्षित) हो गया है। प्राचीन और प्रसिद्ध इतिहासकार इब्ने-इसहाक़ कहते हैं—

"ख़ुवैलिद की बेटी हज़रत ख़दीजा *(रज़ि.)* आप *(सल्ल.)* पर ईमान लाईं, अल्लाह की तरफ़ से जो दीन आप *(सल्ल.)* लाए उसकी पुष्टि की। आप *(सल्ल.)* की तबलीग़ी कोशिशों में आप *(सल्ल.)* की मदद फ़रमाई। अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाने और आप *(सल्ल.)* की तालीमात (शिक्षाओं) को माननेवालों में पहली हस्ती उन्हीं की थी। अल्लाह ने उनके ज़रीए अपने नबी *(सल्ल.)* का बोझ हल्का किया। अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* अपने खण्डन किए जाने, झुठलाने या और कोई तकलीफ़ देनेवाली बात सुनते तो जिस वक़्त आप *(सल्ल.)* हज़रत ख़दीजा *(रज़ि.)* के पास पहुँचते तो अल्लाह उनके ज़रीए उसे दूर फ़रमा देता। वे आप को साबित-क़दम रखतीं, आप *(सल्ल.)* का ग़म हल्का करतीं, आप *(सल्ल.)* की बातों की पुष्टि करतीं और लोगों के व्यवहार की निन्दा और आलोचना करतीं। अल्लाह उनसे राज़ी हो और रहम फ़रमाए।"

(सीरत इब्ने-हिशाम 1/259)

## धार्मिक (दीनी) मामलों में मियाँ-बीवी का आपसी सहयोग ज़रूरी है

इस्लाम के निकट मियाँ-बीवी को दीन के मामले में एक-दूसरे का सहयोगी और मददगार होना चाहिए। यह सहयोग कितना पसन्दीदा और किस क़द्र मतलूब है इसका अन्दाज़ा निम्नलिखित हदीसों से हो सकता

है। हज़रत अबू-हुरैरा *(रज़ि.)* से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने फ़रमाया :

> "अल्लाह की रहमत हो उस आदमी पर जो रात को उठे और नमाज़ पढ़े और अपनी बीवी को भी जगाए। अगर वह न उठे तो उसके मुँह पर पानी छिड़क दे। अल्लाह की रहमत हो उस औरत पर भी जो रात को उठे, नमाज़ पढ़े और अपने शौहर को जगाए। अगर वह न उठे तो उसके चेहरे पर पानी छिड़क दे।" (अबू-दाऊद, नसाई)

हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी *(रज़ि.)* और हज़रत अबू-हुरैरा *(रज़ि.)* से रिवायत आती है कि अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने फ़रमाया—

> "जब आदमी अपनी बीवी को रात में जगाए और दोनों (अलग-अलग) या मिलकर एक साथ दो रकअत (भी) नमाज़ पढ़ लें तो उनका नाम अल्लाह को याद करनेवालों और याद करनेवालियों में लिख दिया जाता है।"
>
> (अबू-दाऊद, इब्ने माजा)

इन हदीसों में इस बात की तरग़ीब दी गई है कि शौहर बीवी को और बीवी शौहर को नमाज़ की तरफ़ तवज्जोह दिलाए प्यार-मुहब्बत से रात में जागने के लिए आमादा करे और कोशिश करे कि उसका जीवन-साथी भी उठे और अल्लाह के सामने सजदे में गिर जाए ताकि जिस नेक काम से उसे फ़ायदा मिल रहा है उसके जीवन भर का साथी भी इससे महरूम (वंचित) न रहे। नमाज़ सबसे बड़ी इबादत (उपासना) है। दीन में किसी भी अमल को इससे ज़्यादा अहमियत हासिल नहीं है। अगर मियाँ-बीवी के बीच नमाज़ के सिलसिले में सहयोग होने लगे तो उम्मीद यही है कि दीन के हर मामले में वे एक-दूसरे का सहयोग करेंगे?

## नेक शौहर के साथ सहयोग की शक्लें

शौहर अगर दीनदार है, ख़ुदा और बन्दों के अधिकारों को पहचानता है, अपनी हद तक दीन की दावतो-तबलीग़ और ख़ुदा के बन्दों की इस्लाह (सुधार) में सरगर्म है तो औरत का फ़र्ज़ है कि इन तमाम कामों में उसकी मदद करे, उसके लिए हर मुमकिन सहूलत और आसानी पैदा करे। अच्छे कामों में कभी उससे ग़फ़लत और कोताही हो तो नरमी और प्यार से उसे तवज्जोह दिलाए, ख़ुदा के दीन के लिए कोशिश करने और उसकी ख़ातिर वक़्त, आराम, चैन और रुपया-पैसा ख़र्च करने को अपने लिए भी और शौहर के लिए भी बहुत बड़ी नेकबख़्ती समझे, इस रास्ते में जो कठिनाइयाँ आएँ उन्हें सब्र और सुकून के साथ सहन करे। किसी नेक बन्दे के लिए इस तरह की बीवी दुनिया की सबसे बड़ी दौलत है। अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* से पूछा गया कि दुनिया की वह बेहतरीन दौलत क्या है जिसे इनसान अपने पास रखे। आप *(सल्ल.)* ने फ़रमाया—

> "सबसे अच्छी दौलत है अल्लाह का ज़िक्र करनेवाली ज़बान, उसका शुक्र अदा करनेवाला दिल और ऐसी ईमानवाली बीवी जो ईमान के रास्ते में उसकी मदद करे।"

(तिर्मिज़ी, अबवाबुत्तफ़सीर, तफ़्सीर सूरा तौबा)

## बीवी के सहयोग से हिम्मत बढ़ती है

बीवी के सहयोग और मदद से आदमी की हिम्मत बढ़ती है, वह अपने अन्दर ताक़त और साहस महसूस करता है। जिस काम में बीवी साथ दे आदमी उसे ख़ुशदिली के साथ अन्जाम देता है और उस रास्ते की कठिनाइयों को भी बड़ी आसानी से झेल जाता है। बीवी की ज़बान से तारीफ़ का एक शब्द दूसरों की हज़ार तारीफ़ और प्रशंसा से बेहतर होता है। अगर बीवी सच्चे दिल से यह कह दे कि आप अपने मक़सद

के लिए जो कुछ कर रहे हैं वह सही है, इसे जारी रखिए, मैं आपके साथ हूँ तो आदमी बाहर की मुख़ालिफ़तों (विरोधों) के बावजूद उसे जारी रख सकता है। वरना हिम्मत टूटने लगती है। बीवी का सहयोग हो तो वे लोग भी दीन पर अमल करने लगते हैं जिनका दीनी एहसास कुछ ज़्यादा ताक़तवर नहीं होता है। लेकिन अगर बीवी दीनी फ़िक्र की हामिल न हो, भौतिक मानसिकता रखती हो और आख़िरत को भूलकर दुनियादाराना जीवन बसर करने पर ज़िद करने लगे तो बहुत से नेक और अच्छे इनसान भी दीन से पीछे हट जाते हैं और उन्हें बहुत से वे काम करने पड़ते हैं जिनकी शरीअत इजाज़त नहीं देती और जो ख़ुदा के नज़दीक सख़्त नापसन्द और नफ़रत के क़ाबिल है।

## आदमी हक़ पर साबित क़दम रह सकता है

दीन के मामले में आदमी से जो साबित-क़दमी मतलूब है उसके लिए भी बीवी के सहयोग और मदद की बड़ी अहमियत है। सहाबा किराम *(रज़ि.)* ने दीन के रास्ते में जिस बेमिसाल साबित-क़दमी का सुबूत दिया उसके पीछे उनकी नेक और ख़ुदा-तरस बीवियों का भी हाथ है। इस्लामी इतिहास गवाह है कि उन्होंने नाज़ुक से नाज़ुक हालात में भी अपने शौहरों का साथ न छोड़ा और उन्होंने जो भी क़दम उठाया उसकी उन्होंने ताईद (समर्थन) और हिमायत की। तंगी, सख़्ती, मुख़ालिफ़त और कशमकश, हिजरत और जिहाद हर-हर क़दम में सहाबा किराम *(रज़ि.)* को उनकी पाक बीवियों का सहयोग हासिल रहा। ऐसी कोई एक भी मिसाल नहीं मिलती कि सहाबा *(रज़ि.)* के लिए उनकी बीवियाँ कभी पैरों की ज़ंजीर बन गई हों और उनकी राह में रुकावट डाली हो।

## अच्छे शौहरों के साथ असहयोग नापसन्दीदा है

बीवी के सहयोग के बहुत-से फ़ायदे हैं। उनमें से कुछ का यहाँ बयान किया गया है। इस्लाम में यह सहयोग जितना मतलूब और

पसन्दीदा है उसी क़द्र यह बात सख़्त नापसन्दीदा और मज़म्मत के क़ाबिल है कि कोई औरत अपने नेक शौहर के साथ असहयोग का चलन अपनाए। हदीस में आता है कि किसी परहेज़गार और ख़ुदा-तरस इनसान को उसकी बीवी परेशान करती है तो जन्नत (स्वर्ग) में उसे जो 'हूर' मिलनेवाली है वह कहती है–

"तेरा बुरा हुआ। उसे तकलीफ़ न दे। वह तो तेरे पास अजनबी है। बहुत जल्द हमारे पास पहुँच जाएगा।" (तिर्मिज़ी, इब्ने-माजा)

## बुरे शौहर की इस्लाह (सुधार)

एक मुस्लिम औरत के लिए उस वक़्त मसले पैदा होते हैं जबकि शौहर को दीन से दिलचस्पी न हो। वह तो दीन को ही सब कुछ समझे और शौहर उसे अहमियत न दे। वह दीन पर चलना चाहे और शौहर उसकी मुख़ालिफ़त करे। वह अपने घर और माहौल को इस्लामी बनाने की कोशिश करे और शौहर उसकी राह में रुकावट हो। जो औरतें इस सूरते-हाल से दोचार हों उनको बड़े ही सब्र-ज़ब्त और हिकमत तथा समझदारी के साथ इस्लाह (सुधार) की कोशिश करनी चाहिए।

## इस्लाह (सुधार) की तदबीरें

इस तरह की औरतों को कुछ बातों का ख़ास ख़याल रखना चाहिए :

1- जहाँ तक हो सके वे अल्लाह और रसूल *(सल्ल.)* के हुक्मों पर अमल करें। नमाज़, रोज़ा, सदक़ा, ख़ैरात, तिलावत, ज़िक्र और दूसरी इबादतों का एहतमाम करें। लिबास, बनाव-सिंगार, सामाजिकता और आपसी सम्बन्धों में इस्लामी हदों की पाबन्द रहें। अख़लाक़ और जीवन-चरित्र का अच्छा नमूना पेश करें। यह ख़ामोश तबलीग़ होगी। अगर शौहर में दीनी हिस ज़िन्दा हो तो वह इससे प्रभावित ज़रूर होगा और इस पर ज़रूर ग़ौर करेगा।

2. अल्लाह ने शौहर के बहुत सारे हक़ बताए हैं। उन हक़ों के अदा करने में अपनी हद तक कोताही न करें। भलाई में उसकी इताअत को ज़रूरी समझें, लेकिन अगर किसी बुराई (गुनाह) का हुक्म दे तो अपनी माज़ूरी (विवशता) ज़ाहिर कर दें और नरमी से यह समझा दें कि आप अल्लाह की नाफ़रमानी नहीं कर सकतीं। इससे वक़्ती तौर पर शौहर की नाराज़गी मोल लेनी पड़े तो इसकी परवाह न करें। इससे दीन की अहमियत और बढ़ेगी। शौहर के साथ मुहब्बत, हमदर्दी और ग़मख़्वारी का रवैया (चलन) रखें, उसके दुख-दर्द को अपना दुख-दर्द समझें, उसके धन-दौलत की अपने धन-दौलत की तरह हिफ़ाज़त करें और किसी भी ऐसे क़दम उठाने से जहाँ तक मुमकिन हो बचें जिससे आपसी सम्बन्ध ख़राब हो सकते हों। शराफ़त और अख़लाक़ से बड़ा हथियार आज तक इनसान खोज नहीं पाया है। इससे बड़े-से-बड़े विरोधी का दिल जीता जा सकता है, इसलिए आपका अख़लाक़ी रवैया शौहर को भी बदल सकता है।

3. शौहर के मर्तबे और मक़ाम का पूरा ख़्याल रखते हुए दिलसोज़ी, और ग़मख़्वारी के साथ उसकी इस्लाह की कोशिश जारी रखें। लेकिन लगातार वाज़-नसीहत और उपदेशों से बचें। जब आमादगी महसूस करें तो कोई आयत, कोई हदीस या बुज़ुर्गों का कोई वाक़िआ सुना दें। या फिर अच्छे और प्रभावशाली अन्दाज़ में दीन का कोई पहलू स्पष्ट कर दें। इसी तरह ज़ौक़ के मुनासिब कोई किताब, रिसाला (पत्रिका) या अख़बार पढ़ने के लिए दे दें या पढ़कर सुना दें। इस तरह धीरे-धीरे ज़ेहन को मोड़ने की कोशिश करें। जल्दबाज़ी करना बेकार है।

4. इस सिलसिले में बहस-तकरार, एतिराज़, आलोचना, तन्ज़ उपहास किसी तरह मुफ़ीद नहीं है। तुन्दी और तेज़ी, ग़ुस्सा और नाराज़गी ज़ाहिर करना भी हानिकारक है। इससे आदमी के अन्दर ज़िद, हठधर्मी और नफ़रत पैदा हो सकती है और फिर वह इस्लाम से ज़्यादा

दूर हो सकता है। छोटों की आलोचना सहन करना बड़े दिल-गुर्दे का काम है। यह उसी वक़्त मुमकिन है जबकि दीनी जज़्बा बहुत ज़्यादा मज़बूत हो। जहाँ यह जज़्बा न हो वहाँ आलोचना (तनक़ीद) करने से बचना चाहिए।

5. आदमी जिस माहौल या समाज में उठता-बैठता है उसका उसके बनाने या बिगाड़ने में बड़ा दख़ल होता है। अगर शौहर दीन और अख़लाक़ को ख़राब करनेवाले किसी माहौल में घिर गया है तो उस माहौल से निकालने की पूरी कोशिश होनी चाहिए। उससे निकले बग़ैर सुधार आसान नहीं है। औरत इस मामले में बहुत सहयोगी साबित हो सकती है। अगर वह सब्र और सुकून से काम ले और घर के अन्दर आकर्षण और खिंचाव पैदा कर ले तो शौहर को उस माहौल से निकाल सकती है। ऐसी सूरत में आम तौर पर मियाँ-बीवी की अलहदगी के बारे में सोचा जाता है। लेकिन यह तो आख़िरी इलाज है। इससे पहले एक दीन दार औरत को शौहर की इस्लाह की भरपूर कोशिश करनी चाहिए।

## बच्चों की इस्लाह (सुधार)

जहाँ तक बच्चों का सम्बन्ध है, माँ उनकी निगराँ और सरपरस्त है। वे भलाई में उसकी इताअत के पाबन्द हैं। उसे उनकी इस्लाह और तरबियत का अख़लाक़ी और क़ानूनी हक़ हासिल है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन-उमर *(रज़ि.)* की एक मशहूर रिवायत में आता है कि अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने फ़रमाया—

> "औरत निगराँ है अपने शौहर के घर और उसके बच्चों की और उनके बारे में उससे पूछा जाएगा।" (बुख़ारी, मुस्लिम)

माँ की यह दीनी ज़िम्मेदारी है कि वह बच्चों को इस्लाम की तालीम दे, उनको इस्लाम और ग़ैर इस्लाम का फ़र्क़ समझाए और दीन का सही, मुकम्मल और व्यापक ख़्याल और विचार उनके ज़ेहनों में बिठाए। उनके जीवन-चरित्र को इस्लाम के साँचे में ढालने की कोशिश

करे। कुफ़्र, शिर्क और बिदअत से बचने की तालीम दे। नमाज़, रोज़ा और दूसरे शरई हुक्मों का पाबन्द बनाए, उनके अन्दर दुनिया की मुहब्बत की जगह दीन की मुहब्बत पैदा करे और दीन की ख़िदमत और उसे सरबुलन्द करने का जज़बा उभारे। यह दीन जो हम तक पहुँचा है उसमें बड़ा दख़ल हमारी उन माँओं का है जिन्होंने उसे एक नस्ल से दूसरी नस्ल तक पहुँचाने की कोशिश की।

आज हमारे चारों-तरफ़ ग़ैर इस्लामी माहौल छाया हुआ है। इनसान इस्लाम से तो वाक़िफ़ नहीं होता अलबत्ता उसे ग़ैर इस्लामी ख़यालों और विचारों का रात-दिन दर्स मिलता रहता है। दीन की तालीम अगर कहीं मिलती भी है तो बहुत नाक़िस और अधूरी। अगर हमारी माएँ अपनी ज़िम्मेदारियों को महसूस करें तो हमारे घर दीनी-तालीम के बेहतरीन सेन्टर (केन्द्र) बन जाएँ। इससे एक तरफ़ तो मिल्लत को ख़ुदा-तरस लोग, दीन के सच्चे ख़ादिम और जान पर खेल जानेवाले सिपाही मिलते रहेंगे और दूसरी तरफ़ बाहर की दुनिया में मर्द ज़्यादा अच्छे तरीक़े से दावत और तबलीग़ का फ़र्ज़ अन्जाम दे सकेंगे।

## ख़ानदान की इस्लाह

शौहर और बच्चों के अलावा भाई, बहन और ख़ानदान के दूसरे क़रीबी रिश्तेदारों में भी एक मुसलमान औरत को दावत, तबलीग़, इस्लाह और तरबियत का फ़र्ज़ अन्जाम देना चाहिए। अपने बड़ों में दीन से ग़फ़लत और कोताही पाई जाती है या उन्हें अपनी ज़िम्मेदारियों का एहसास नहीं है तो अदब और एहतिराम के साथ उन्हें उसकी तरफ़ तवज्जोह दिलानी चाहिए। बड़ों की ग़लतियों पर न टोकना या चुप बैठ रहना ख़ैरख़ाही नहीं है। जो छोटे हैं उनको दीन की अहमियत समझानी चाहिए। अगर वे इस्लाम से नावाक़िफ़ हैं तो उन्हें उसके अध्ययन की तरफ़ उभारना चाहिए। इस्लाम के बारे में उनकी मालूमात नाक़िस और अधूरी हों तो उनको सही और पूरी-पूरी मालूमात फ़राहम करनी चाहिए।

वे किसी ग़लतफ़हमी का शिकार हों तो उसकी इस्लाह करनी चाहिए। अगर उनमें कोई दीनी और अख़लाक़ी (नैतिक) कमज़ोरी हो तो उसे प्यार-मुहब्बत से दूर करने की कोशिश करनी चाहिए। ग़रज़ यह कि इस मामले में उनकी जो भी मदद की जा सकती हो की जानी चाहिए।

## माहौल की इस्लाह

परिवार और ख़ानदान से बाहर भी शरई (दीनी) हदों का लिहाज़ रखते हुए मुसलमान औरतों को दावत और इस्लाह का फ़र्ज़ अन्जाम देना चाहिए। बुराइयाँ हमारे घरों ही में नहीं, पूरे माहौल में फैल चुकी हैं। ख़ुदा-बेज़ारी, इबादतों से ग़फ़लत, अख़लाक़ में गिरावट, मामलों में बिगाड़, ज़ुल्म-ज़्यादती, ऊँच-नीच और ग़लत रस्मो-रिवाज ने समाज को अपनी लपेट में ले रखा है। इसकी इस्लाह और सुधार में औरतों को भी अपना हिस्सा अदा करना चाहिए। वे तक़रीरों के ज़रीए, निबंध और लेख लिखकर इन बुराइयों के ख़िलाफ़ माहौल भी बना सकती हैं और इस्लामी शिक्षाओं से लोगों को परिचित भी करा सकती हैं।

## दीन की दावत देनेवालों की रिश्तेदार औरतों की ज़िम्मेदारी बढ़ जाती है

बहुत-सी औरतें वे भी हैं जिनके शौहर, बाप-भाई सब दीन के पूरी तरह पाबन्द हैं और उसकी ख़िदमत और दावत व तबलीग़ में लगे हुए हैं। ऐसी औरतों की ज़िम्मेदारी बहुत बढ़ जाती है। किसी नेक, ख़ुदा-तरस और दीन की ओर बुलानेवाले शख़्स से रिश्ता और सम्बन्ध का होना बहुत बड़ी ख़ुश-क़िस्मती है। इससे दीन की राह साफ़ और स्पष्ट हो जाती है और अमल में आसानी होती है। इसलिए इस तरह की औरतों को दीन का बेहतर नमूना होना चाहिए। अपने बड़ों को दीन पर अमल करते हुए, नसीहत-उपदेश और दावत-तबलीग़ में वक़्त लगाते हुए, इसके लिए मेहनत-मशक़्क़त करते हुए और जान-माल और ऐश व

आराम की क़ुरबानी देते हुए अपनी आँखों से देखने के बावजूद दीन की तरफ़ न लौटना और उससे दूर रहना बड़ी ही बदनसीबी है। इसपर जितना भी अफ़सोस किया जाए कम है। उससे बड़ा महरूम (वंचित) और कौन होगा जो अपने घर ही की दौलत से वंचित रह जाए। उससे इस दावत को भी नुक़सान पहुँचता है जिसे मर्द बाहर की दुनिया में अन्जाम दे रहे हैं। जब किसी दीन के दाई के बीवी-बच्चे ही दीन से दूर हों तो दूसरों के लिए उसमें क्या कशिश हो सकती है? कहनेवाले कहेंगे कि जिस दीन को आप पूरी दुनिया में क़ायम करना चाहते हैं पहले उसे अपने बीवी-बच्चों पर लागू करके दिखाएँ। इस सिलसिले में हमें उन हिदायतों से रहनुमाई मिलती है जो अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* की पाक बीवियों को दी गई। अल्लाह का फ़रमान है –

> "ऐ नबी *(सल्ल.)* अपनी बीवियों से कह दो कि अगर तुम दुनिया की ज़िन्दगी और उसकी ज़ीनत (बनाव-सिंगार) चाहती हो तो आओ मैं तुम्हें दुनिया का सामान (अपनी ताक़त की हद तक) दे दूँ और अच्छी तरह रुख़सत (जुदा) कर दूँ। लेकिन अगर तुम अल्लाह, उसके रसूल और आख़िरत के घर की चाहत रखती हो तो यक़ीन जानो कि तुममें जो नेकूकार हैं अल्लाह ने उनके लिए बहुत ही बड़ा अज्र तैयार कर रखा है। ऐ नबी की बीवियो! तुम में से जो भी किसी खुली बेहयाई का चलन अपनाएगी उसे दो गुना अज़ाब दिया जाएगा और यह अल्लाह के लिए आसान है। (इसी तरह) तुममें से जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत (पैरवी) करेगी और नेक अमल करेगी तो हम उसे अज्र (भी) दोहरा देंगे, और हमने उसके लिए पाकीज़ा रिज़्क़ तैयार कर रखा है। ऐ नबी की औरतो! तुम आम औरतों की तरह नहीं हो, अगर परहेज़गारी अपनाओ। लिहाज़ा बोलने में लचक न पैदा करो ताकि जिसके दिल में बीमारी है वह लालच में न पड़

जाए, और भली बात कहो। अपने घरों में सुकून और क़रार से रहो। पिछली जाहिलीयत की सज-धज और ज़ीनत न अपनाओ। नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करो। ऐ नबी की घरवालियो! अल्लाह चाहता है कि तुमसे गन्दगी दूर करे और तुम्हें अच्छी तरह पाक करे। तुम्हारे घरों में अल्लाह की आयतों और हिक्मत की जो तालीम होती है उसका ज़िक्र करो। अल्लाह बहुत ही बारीक-बीं (सूक्ष्मदर्शी) और ख़बर रखनेवाला है।''

(क़ुरआन, 33 : 28-34)

इन आयतों का एक पसमन्ज़र है। वह यह कि अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* और आप *(सल्ल.)* के साथी लोगों को अल्लाह के दीन की तालीम दे रहे थे, उनके अक़ीदों, इबादतों, अख़लाक़ और मामलों की इस्लाह फ़रमा रहे थे। इस तरह एक पाकीज़ा समाज के बनाने में लगे हुए थे। लेकिन जिन लोगों के दिलों में कपट (निफ़ाक़) का रोग था और जो अल्लाह और उसके रसूल के दुश्मन थे, वे चाहते थे कि यह कोशिश कामयाब न हो और समाज बेदीनी और बदअख़लाक़ी की दलदल से न निकल पाए। उनकी यह दौड़-धूप जहाँ मर्दों के बीच हो रही थी, औरतों के अन्दर भी हो रही थी। इस सिलसिले में उनका बड़ा निशाना अल्लाह के नबी की पाक बीवियाँ थीं। पाक बीवियों की नेकी, परहेज़गारी, इताअत और फ़रमाँबरदारी की वजह से अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* को जो सुकून-चैन हासिल था और उनका जीवन-चरित्र जिस तरह दूसरी औरतों को प्रभावित कर रहा था यह उनके लिए बरदाश्त से बाहर था। वे चाहते थे कि अपने ग़लत और गुमराह करनेवाले दुष्प्रचार और दुनियादारी की तबलीग़ से पाक बीवियों पर प्रभावी हों। इसलिए कि इसके बाद दूसरी औरतों को आसानी से प्रभावित किया जा सकता था। यह सूरतेहाल थी जिसमें पाक-बीवियों को उनका मर्तबा और मक़ाम बताया

गया और उनकी ज़िम्मेदारियों से आगाह किया गया ताकि वे दीन पर साबित-क़दमी का और ज़्यादा सुबूत दें।

एक ख़ास प्रसंग में नबी *(सल्ल.)* की पाक-बीवियों को जो हिदायतें दी गई हैं उनमें उन सब औरतों के लिए सबक़ और नसीहत है जिनके बड़े और ज़िम्मेदार बुज़ुर्ग परहेज़गारी और ख़ुदातरसी की ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं और दीन की ख़िदमत में लगे हुए हैं। इस आइने (दर्पण) में उन्हें अपने जीवन-चरित्र का जायज़ा लेना चाहिए।

# दीनी-ख़िदमत अंजाम देनेवाली औरतों के लिए ज़रूरी ख़ूबियाँ

जो औरतें दीन की दावत, तबलीग़, इस्लाह और तरबियत का बड़ा काम अन्जाम दे रही हैं या अन्जाम देना चाहती हैं उनके अन्दर नीचे लिखी कुछ विशेषताओं और ख़ूबियों का पाया जाना मतलूब और पसन्दीदा ही नहीं बल्कि बाज़ पहलुओं से निहायत ज़रूरी है। इसका मतलब यह नहीं है कि मर्दों के लिए इन विशेषताओं की अहमियत नहीं है या कुछ कम है। सच्ची बात तो यह है कि दावत का काम हर आदमी से इन विशेषताओं और ख़ूबियों की माँग करता है। जब तक उसके अन्दर ये विशेषताएँ और ख़ूबियाँ न हों तब तक वह इस काम का हक़ अदा नहीं कर सकता। इस पहलू से दीन के हर दाई (आमन्त्रणदाता) की ये ज़रूरी ख़ूबियाँ हैं। अलबत्ता हम यहाँ औरतों के लिए इनकी अहमियत नुमायाँ करेंगे।

## इल्मी तैयारी-

हमारी औरतों में दीन का इल्म बहुत कम है। उनके दीन की बुनियाद कुछ रस्मो-रिवाज और रिवायतों पर क़ायम है। वे दीन की क़द्रो-क़ीमत से बिल्कुल बेख़बर हैं। उनको यह नहीं मालूम कि ज़िन्दगी बनाने में इसकी क्या अहमियत है। इसके हुक्मों में कितनी गहराई है और इनकी पाबन्दी हमारे लिए क्यों ज़रूरी है? वे दीन पर किसी एतिराज़ का जवाब नहीं दे सकतीं, उसके किसी हुक्म की मुख़ालिफ़त हो तो सामना नहीं कर सकतीं और किसी सवाल का माक़ूल

और तसल्ली-बख़्श जवाब उनके लिए मुमकिन नहीं है। इसके साथ उन्हें न तो अपने माहौल की ख़बर है और न उन ख़यालों और विचारों की जानकारी है जो सारी ख़राबियों की जड़ हैं। दीन के बारे में इतनी कम और महदूद मालूमात और हालात से इतनी बेख़बरी के साथ दावत और इस्लाह का इतना महान काम अन्जाम नहीं पा सकता। इसके लिए अपने माहौल को समझना होगा। मौजूदा वक़्त में छाए विचारों, नज़रियों से जानकारी हासिल करनी होगी और इस्लाम की रौशनी में उनका आलोचनात्मक विश्लेषण करना होगा। यह आसान काम नहीं है। इसके लिए ज़रूरी है कि हमारी औरतें, कम-से-कम वे औरतें जो दावत और तबलीग़ का फ़र्ज़ बड़े पैमाने और ऊँची सतह से अन्जाम देना चाहती हैं, इल्मी और फ़िक्री तैयारी करें। इस्लाम और ग़ैर इस्लाम दीनों को विस्तार से समझें। बोलने और लिखने की मश्क़ (अभ्यास) करें, इसके लिए वक़्त निकालें और मेहनत करें।

औरतों का दावत और तबलीग़ के लिए तैयार होना एक और पहलू से भी बहुत ज़रूरी है। इस वक़्त औरतों की इस्लाह और तरबियत का काम भी आम तौर से मर्दों ही को करना पड़ता है। इसमें कठिनाइयाँ भी हैं और नज़ाकतें भी। इसका फ़ितरी तरीक़ा यह है कि मर्दों के बीच मर्द और औरतों के बीच औरतें काम करें। औरतों की मानसिकताओं, मसलों, उलझनों, ख़ूबियों और ख़ामियों की जानकारी मर्दों से ज़्यादा औरतों को हो सकती है और वे उन मसलों को हल भी कर सकती हैं। इसलिए औरतों के बीच काम के लिए औरतें ही मुनासिब हो सकती हैं। अगर मुसलमान औरतें इस मैदान को सँभाल लें तो दावत और तबलीग़ का आधा मसला हल हो जाए। वह बहुत ही मुबारक वक़्त होगा जब इस उम्मत के मर्द और औरतें दोनों ही ख़ुदा के दीन की ख़िदमत के लिए खड़े हो जाएँ। उसी वक़्त क़ुरआन मजीद का यह मंशा पूरा होगा कि ईमानवाले मर्द और औरतें एक-दूसरे के वली (वारिस) हैं। भलाई का हुक्म देते और बुराई से मना करते हैं।

## पूरे दीन पर अमल

जो लोग दीन का नाम लें उनको दीन पर अमल भी करना चाहिए। अगर वे ख़ुद दीन पर अमल न करें तो दूसरों को उसपर अमल करने की क्या दावत दे सकते हैं। ख़ुदा के पैग़म्बर जो दीन के सबसे बड़े दाई होते हैं वे बार-बार अपने "पहला मुस्लिम" होने का एलान करते हैं। इसका मतलब यह है कि जिस ख़ुदा की बन्दगी और इबादत की हम दावत देते हैं सबसे पहले हम ख़ुद उसके सामने सिर झुकाते हैं और उसकी इताअत करते हैं। दीन के बारे में आज बहुत-सी ग़लत-फ़हमियाँ फैली हुई हैं। यह कि वह 'out of date' है, अमल के लायक़ नहीं, तरक़्क़ी में रुकावट है आदि। आपकी बे-अमली से इन सब बातों की ताईद होगी। कहनेवाले कहेंगे कि दीन की तरफ़ बुलाने वाले भी इसपर अमल नहीं कर सकते।

दीन पर अमल करने का मतलब यह नहीं है कि आप दीन के सिर्फ़ उन हुक्मों और आदेशों पर अमल करें जो आपके लिए आसान हों और जिनके करने को आपका जी चाहे। जो हुक्म कुछ सख़्त हों और आपके मुताबिक़ न हों आप उनको छोड़ बैठें। दीन पर अमल का मतलब यह है कि उन तमाम आदेशों पर अमल किया जाए जिनपर अमल का दीन आपसे मुतालबा करता है। बहुत-सी औरतें नेक और दीनदार होती हैं, लेकिन उनकी नेकी और दीनदारी सीमित होती है। वे नमाज़ पढ़ेंगी और रोज़े भी रखेंगी लेकिन ज़कात नहीं अदा करेंगी, बल्कि इसकी फ़िक्र भी उन्हें नहीं होगी। क़ुरआन मजीद की तिलावत करेंगी और इसमें कोताही पर उन्हें अफ़सोस भी होगा लेकिन इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं होगी कि ख़ुद उनकी औलाद क़ुरआन नहीं पढ़ पा रही है और वे अपने बच्चों की तालीम के लिए कोई वक़्त नहीं निकाल सकेंगी। वे तस्बीहों और वज़ीफ़ों का तो बहुत एहतिमाम करेंगी लेकिन पड़ोसियों के यहाँ तक कि क़रीब-से-क़रीब रिश्तेदारों के हुक़ूक़ अदा

करने में कोताही करेंगी। इसमें कोई शक नहीं कि जिन आदेशों और हुक्मों पर वे अमल करती हैं वह सब भी बहुत अहम हैं। उम्मीद है कि अल्लाह के यहाँ इसका अज्र-व-सवाब ज़रूर मिलेगा लेकिन इससे वे दूसरे हुक्म ख़त्म नहीं हो जाते जिनकी ज़िम्मेदारी उनपर लागू होती है। उनके बारे में अन्देशा है कि कल ख़ुदा के यहाँ पूछ-गछ होगी।

जिन हुक्मों के सिलसिले में औरतों में ग़फ़लत पाई जाती है उनके सम्बन्ध में जानते-बूझते या अनजाने तौर पर उनके अन्दर यह एहसास पाया जाता है कि वे सिर्फ़ मर्दों के लिए हैं। नमाज़ तो उनपर फ़र्ज़ है लेकिन ज़कात अदा करना, चाहे वह ख़ुद उनके ज़ेवर और माल ही की क्यों न हो, मर्द पर वाजिब है। बच्चों को अच्छा खिलाना-पिलाना, साफ़-सुथरा रखना और उनकी ख़िदमत करना तो उनका काम है लेकिन उनको नमाज़-रोज़ा सिखाना और अच्छी तरबियत देना मर्द के फ़र्ज़ों में से है। जहाँ तक दावत, तबलीग़ और मिल्लत की इस्लाह का काम है उसे वे अपनी ज़िम्मेदारी ही नहीं समझतीं। जबकि ख़ुदा और रसूल ने इस तरह की कोई तफ़रीक़ नहीं की है। उसके नज़दीक इन सब आदेशों के मुख़ातिब दोनों ही हैं। अगर मर्द उनपर अमल करेंगे तो वे अज्रो-सवाब के हक़दार होगें और औरतें उन पर अमल करेंगी तो वे उसके सवाब और अज्र की पात्र होंगी। क़ुरआन में आया है—

> "मर्दों का हिस्सा वह है जो उन्होंने कमाया और औरतों का हिस्सा वह है जो उन्होंने कमाया।" (क़ुरआन, 4:32)

यह आयत साफ़ बताती है कि अल्लाह के यहाँ इनसान को उसके अमल के मुताबिक़ अच्छा या बुरा बदला मिलेगा। वह यहाँ जो बोएगा वही वहाँ काटेगा। अगर वह अच्छे अख़लाक़ का है तो अज्र व सवाब से नवाज़ा जाएगा और बदकार है तो अज़ाब में फँसेगा। अल्लाह का यह क़ानून बिल्कुल अटल है। इसमें मर्द और औरत के बीच कोई फ़र्क़ नहीं है। अगर औरतें अल्लाह के इस क़ानून को अपने सामने रखें तो

ग़फ़लत की ज़िन्दगी ख़त्म हो सकती है और अपनी ज़िम्मेदारियों के सही एहसास के साथ अमल के मैदान में आगे बढ़ सकती हैं।

## हक़ की राह में साबित-क़दमी

किसी सिद्धान्त या दृष्टिकोण को अपना लेना और हर सूरत में उसपर मज़बूती से जमें रहना साबित-क़दमी है। दुनिया में जहाँ इसकी मिसालें हैं कि औरतों ने बातिल (असत्य) की राह में साबित-क़दमी दिखाई, हक़ (सत्य) के लिए भी उनकी साबित-क़दमी की मिसालें मौजूद हैं। हक़ के लिए साबित-क़दमी बहुत तारीफ़ और प्रशंसा के लायक़ है। इससे ख़ुदा की मख़लूक़ को फ़ायदा पहुँचता है और दुनिया में अच्छी मिसाल क़ायम होती है। इसी से इनसान अल्लाह के रहमो-करम और दया-दृष्टि का हक़दार क़रार पाता है। इसके बरख़िलाफ़ (विपरीत) बातिल के लिए साबित-क़दमी बहुत निन्दनीय और नापसन्दीदा है। इस रास्ते में जो कामयाब नज़र आता है वह भी नाकाम है। जिन्होंने बातिल पर जमे रहने की ज़िद की वे ख़ुद भी तबाह हुए और दुनिया को भी तबाह किया।

## बातिल पर जमने की ज़िद तबाही है

क़ुरआन मजीद ने दो ऐसी औरतों का ज़िक्र किया है जो दावत, तबलीग़, वाज़; याददिहानी और इस्लाह की सारी कोशिशों के बावजूद अपनी ग़लत रीति पर जमी रहीं और आख़िरकार दुनिया और आख़िरत में बहुत ही बुरे अन्जाम से दोचार हुईं। फ़रमाया गया—

> "अल्लाह ने उन लोगों के लिए जिन्होंने कुफ़्र (इनकार) किया मिसाल दी है नूह *(अलैहि.)* की औरत की और लूत *(अलैहि.)* की औरत की। वे दोनों हमारे बन्दों में से दो नेक बन्दों के निकाह में थीं। उन्होंने उनके साथ ख़ियानत की (और उनका हक़ न पहचाना और अल्लाह के हुक्मों की नाफ़रमानी) की तो वे नेक

बन्दे भी उनके काम न आए और कह दिया गया कि जहन्नम में दाख़िल होनेवालों के साथ तुम दोनों भी दाख़िल हो जाओ।"

(क़ुरआन, 66 : 10)

बीवी जीवन-साथी और हम-सफ़र होती है, जो क़ुरबत और संगति उसे मिली होती है वह किसी-दूसरे को हासिल नहीं होती। हज़रत नूह *(अलैहि.)* और हज़रत लूत *(अलैहि.)* की बीवियाँ भी रात-दिन उनके साथ रहती थीं। उनकी पाकीज़ा सीरत और बेदाग़ किरदार उनके सामने था। उनके पैग़ाम से वे अच्छी तरह वाक़िफ़ थीं, उनकी दावत-तबलीग़ और इसके लिए उनकी दौड़-धूप को वे देख रही थीं। इनसानों के साथ उनके ख़ुलूस, हमदर्दी और ख़ैरख़ाही से भी वे अच्छी तरह आगाह (परिचित) थीं। लेकिन इस सबके बावजूद उन दोनों ने उनकी दावत क़बूल नहीं की। उनके ख़िलाफ़ साज़िशें करती रहीं, उनके और उनके साथियों के सामने परेशानियाँ और कठिनाइयाँ खड़ी करती रहीं। इस तरह ख़ुदा के इनकारियों और बाग़ियों का आख़िर दम तक साथ दिया और उन्हीं की संगति में हमेशा रहीं। जब ख़ुदा का क़ानून ऐसे लोगों के लिए हरकत में आया तो इनका भी वही हश्र हुआ जो इनकी क़ौमों का हुआ। ख़ुदा के महान पैग़म्बरों से निकट सम्बन्ध भी इनके कुछ काम न आया।

इसमें धमकी और डरावा है उन लोगों के लिए जो हक़ (सत्य) की मुख़ालिफ़त पर कमर कसे हुए हैं और बातिल (असत्य) से चिमटे हुए हैं। कल ख़ुदा के अज़ाब की मार पड़ेगी तो कोई इन्हें बचा न सकेगा, बल्कि कोई पूछने वाला तक न होगा।

## हक़ पर साबित-क़दमी का अन्जाम बेहतर होता है

इन दो इबरत-अंगेज़ मिसालों के बाद क़ुरआन मजीद ने दो नेक और सुचरित्र औरतों को भी नमूने के तौर पर पेश किया है। उनमें

से एक साबित-क़दमी का पहाड़ी थीं और दूसरी वे जिनकी परहेज़गारी और पाकीज़ा सीरत पर चाँद-तारे भी रश्क करते थे। फ़रमाया—

"अल्लाह ने ईमानवालों के लिए मिसाल बयान की है फ़िरऔन की बीवी की। जब उसने दुआ की कि ऐ मेरे रब! मेरे लिए अपने पास जन्नत में एक घर बना दे और मुझे फ़िरऔन और उसके अमल से नजात दे और मुझे ज़ालिमों की क़ौम से नजात दे, और (मिसाल बयान की है) इमरान की बेटी मरयम *(अलैहि.)* की जिसने अपनी इसमत (सतीत्व) की हिफ़ाज़त की। हमने उसमें अपनी 'रूह' फूँकी। उसने अपने रब (पालनहार) के कलिमों और उसकी किताबों की तसदीक़ की, और वह फ़रमाँबरदारों में से थी।" (क़ुरआन, 66:11-12)

फ़िरऔन की बीवी का नाम आसिया, बिन्ते-मज़ाहम था। जब हज़रत मूसा *(अलैहि.)* ने फ़िरऔन के ख़ुदाई-दावे को चैलेन्ज किया और एक अल्लाह की इबादत की दावत दी तो आसिया बिन्ते-मज़ाहम ने उसे हक़ जाना और ईमान ले आईं। फ़िरऔन हज़रत मूसा *(अलैहि.)* का सबसे बड़ा दुश्मन था। इतना बड़ा दुश्मन कि उसकी दुश्मनी दुनियावालों के लिए मिसाल बन गई। इस हक़ के दुश्मन के घर में बैठकर इतना बड़ा क़दम उठाना मौत को दावत देना था। अतः सिर्फ़ यही नहीं कि एक मलिका (रानी) की हैसियत से उनका सारा ऐश-आराम और चैन छिन गया बल्कि उनको इतनी सख़्त सज़ाएँ दी गईं कि उनकी कल्पना ही से लरज़ा और कपकपाहट तारी हो जाती है। हमारे टीकाकारों ने लिखा है कि फ़िरऔन ने उन्हें ज़मीन पर लिटाकर हाथों-पैरों में कीलें ठुकवा दीं और सीने पर भारी पत्थर रख दिया। इसी हाल में उनके प्राण पखेरू उड़ गए। इस तरह आसिया बिन्ते-मज़ाहम ने आज़माइशों के तूफ़ान से गुज़रकर यह साबित कर दिया कि हक़ (सत्य) के लिए औरत वक़्त के फ़िरऔन से भी टक्कर ले सकती है। सुख-सम्पन्नता और आराम-चैन का ठुकरा देना क्या माने रखता है, जान की बाज़ी लगाना भी उसके लिए कोई कठिन काम नहीं है।

सकती है। सुख-सम्पन्नता और आराम-चैन को ठुकरा देना क्या माने रखता है, जान की बाज़ी लगाना भी उसके लिए कोई कठिन काम नहीं है।

दूसरी मिसाल हज़रत मरयम *(अलैहि॰)* की है। क़ुरआन मजीद ने हज़रत मरयम *(अलैहि॰)* के हालात बहुत विस्तार से बयान किए हैं। इनकी पैदाइश से पहले ही इनकी माँ ने इन्हें ख़ुदा के दीन की ख़िदमत के लिए वक़्फ़ कर दिया था। हज़रत ज़करीया *(अलैहि॰)* जैसे पैग़म्बर के हाथों इनकी परवरिश हुई। वे नेकी और परहेज़गारी की मिसाल बनकर उभरीं। जवानी को पहुँचीं तो ख़ुदा की क़ुदरत से बिना निकाह इनके पेट से हज़रत ईसा *(अलैहि॰)* की पैदाइश हुई। एक कुँवारी लड़की के लिए यह बहुत बड़ी परीक्षा थी। इनपर तरह-तरह के इलज़ाम लगाए गए। हज़रत ईसा *(अलैहि॰)* ने अपने गहवारे (पालने) से ही उन इलज़ामों को रद्द कर दिया और अपने पैग़म्बर होने का दावा किया। यह ख़ुदा की शान और क़ुदरत का ज़बरदस्त इज़हार और एक दुधमुंहे बच्चे की ज़बान से हज़रत मरयम *(अलैहि॰)* की पाकदामनी का एलान था। पाँच सौ साल के बाद क़ुरआन मजीद ने भी उनकी इसमत (सतीत्व) और पाकदामनी की गवाही दी। यहाँ इनकी दो ख़ूबियाँ बयान की गई हैं। एक यह कि वे ख़ुदा की शिक्षाओं और उसकी शरीअत को दिल से मानती थीं और दूसरी यह कि वे ख़ुदा की फ़रमाँबरदार थीं। यानी ईमान और अमल दोनों पहलुओं से वे कमाल दर्जे को पहुँची हुई थीं।

अल्लाह के रसूल *(सल्ल॰)* ने फ़रमाया, "तुम्हारे लिए चार औरतें (नमूने के लिए) काफ़ी है। मरयम बिन्ते-इमरान *(अलैहि॰)*, ख़दीजा *(रज़ि॰)* बिन्ते-ख़ुवैलिद, फ़ातिमा *(रज़ि॰)* बिन्ते-मुहम्मद *(सल्ल॰)* और आसिया *(रज़ि॰)* बिन्ते-मज़ाहम"

(तिर्मिज़ी)

एक और हदीस में है कि आप *(सल्ल॰)* ने इन चारों को जन्नती औरतों में सबसे अफ़ज़ल और बरतर क़रार दिया। (मुस्नद अहमद)

ये हैं वे औरतें जिनको अल्लाह और उसके रसूल *(सल्ल॰)* ने नमूने के तौर पर पेश किया है। इन्हीं का जीवन-चरित्र हर मुसलमान औरत के लिए नमूना है। इसके अलावा किसी और नमूने को न तो वे क़बूल कर सकती हैं और न ही अपना सकती हैं।

❖❖❖